विषय-सूची

१. रतनत्तय ·····२
२. सरण-गमन ·····४
३. वन्दना ·····६
४. तिसरण-सीलानं याचना·····१०
५. पञ्चसील-समादान·····१२
६. अट्ठङ्ग-उपोसथ-सीलानं याचना ·····१४
७. अट्ठसील-समादान·····१६
८. देव-आह्वानसुत्त ·····१८
९. उग्घोसन-गाथा·····२०
१०. उदान-गाथा·····२२
११. पटिच्चसमुप्पाद·····२४
१२. पट्ठानपच्चयुद्देस·····२६
१३. जयमङ्गल-अट्ठगाथा·····२८
१४. मङ्गलसुत्त·····३२
१५. रतनसुत्त ·····३६
१६. क रणीयमेत्त-सुत्त·····४४
१७. मेत्ता-भावना ·····४८
१८. मेत्तानिसंससुत्त ·····५२
१९. पराभवसुत्त ·····५६
२०. आटानाटियसुत्त ·····६२

२१. बोज्झङ्गसुत्त ·····६८
२२. नरसीह-गाथा·····७२
२३. पुब्बण्हसुत्त ·····७६
२४. मङ्गल-कामना·····८२
२५. मङ्गल-आसिंसन·····८६
२६. पुञ्ञानुमोदन·····८६
२७. धम्म-संवेग ·····८८
२८. पकिण्णक·····९०
२९. खन्धपरित्त·····९४

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स॥

धम्मगीत

१. रतनत्तय

बुद्धो

इतिपि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिस-दम्म-सारथी सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा'ति।

धम्मो

स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूहीं'ति।

सङ्घो

सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, उजुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, ञायप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, सामीचिप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, यदिदं चत्तारि पुरिसयुगानि अट्ठपुरिसपुग्गला एस भगवतो सावकसङ्घो, आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'ति।

१. त्रिरत्न

बुद्ध

ऐसे ही तो हैं वे भगवान! अरहंत, सम्यक-सम्बुद्ध, विद्या तथा सदाचरण से सम्पन्न, उत्तम गति प्राप्त, समस्त लोकों के ज्ञाता, सर्वश्रेष्ठ, (पथ-भ्रष्ट घोड़ों की तरह) भटके लोगों को सही मार्ग पर ले आने वाले सारथी, देवताओं और मनुष्यों के शास्ता (आचार्य), बुद्ध, भगवान।

धर्म

भगवान द्वारा भली प्रकार आख्यात किया गया यह धर्म, संदृष्टिक है काल्पनिक नहीं, प्रत्यक्ष है, तत्काल फलदायक है, आओ और देखो (कहलाने योग्य है), निर्वाण तक ले जाने योग्य है, प्रत्येक समझदार व्यक्ति के साक्षात करने योग्य है।

संघ

सुमार्ग पर चलने वाला है भगवान का श्रावक संघ, ऋजुमार्ग पर चलने वाला है भगवान का श्रावक संघ, न्याय (सत्य) मार्ग पर चलने वाला है भगवान का श्रावक संघ, उचित मार्ग पर चलने वाला है भगवान का श्रावक संघ, यह जो (मार्ग-फल प्राप्त आर्य) व्यक्तियों के चार जोड़े हैं याने आठ पुरुष-पुद्गल हैं – यही भगवान का श्रावक संघ है, (यही) आवाहन करने योग्य है, पाहुना बनाने (आतिथ्य) योग्य है, दक्षिणा देने योग्य है, अंजलि-बद्ध (प्रणाम) किये जाने योग्य है। लोगों का यही श्रेष्ठतम पुण्य क्षेत्र है।

२. सरण-गमन

बुद्धं जीवितपरियन्तं सरणं गच्छामि।
धम्मं जीवितपरियन्तं सरणं गच्छामि।
सङ्घं जीवितपरियन्तं सरणं गच्छामि॥१॥

नत्थि में सरणं अञ्ञं,
बुद्धो मे सरणं वरं।
एतेन सच्चवज्जेन,
जयस्सु जयमङ्गलं॥२॥

नत्थि मे सरणं अञ्ञं,
धम्मो मे सरणं वरं।
एतेन सच्चवज्जेन,
भवतु ते जयमङ्गलं॥३॥

नत्थि मे सरणं अञ्ञं,
सङ्घो मे सरणं वरं।
एतेन सच्चवज्जेन,
भवतु सब्ब-मङ्गलं॥४॥

२. शरण-गमन

मैं जीवन-पर्यंत बुद्ध की शरण जाता हूं।
मैं जीवन-पर्यंत धर्म की शरण जाता हूं।
मैं जीवन-पर्यंत सङ्घ की शरण जाता हूं॥१॥

मेरी अन्य कोई शरण नहीं,
केवल बुद्ध ही मेरी उत्तम शरण हैं,
इस सत्य वचन (के प्रताप) से
जय हो! मंगल हो!!२॥

मेरी अन्य कोई शरण नहीं,
केवल (लोकोत्तर) धर्म ही मेरी उत्तम शरण है,
इस सत्य वचन (के प्रताप) से
तेरा जय-मंगल हो!!३॥

मेरी अन्य कोई शरण नहीं,
केवल (आर्य) संघ ही मेरी उत्तम शरण है,
इस सत्य वचन (के प्रताप) से
सब का मंगल हो!!४॥

३. वन्दना

ये च बुद्धा अतीता च,
ये च बुद्धा अनागता।
पच्चुप्पन्ना च ये बुद्धा,
अहं वन्दामि सब्बदा॥१॥

ये च धम्मा अतीता च,
ये च धम्मा अनागता।
पच्चुप्पन्ना च ये धम्मा,
अहं वन्दामि सब्बदा॥२॥

ये च सङ्घा अतीता च,
ये च सङ्घा अनागता।
पच्चुप्पन्ना च ये सङ्घा,
अहं वन्दामि सब्बदा॥३॥

यो सन्निसिन्नो वरं बोधिमूले,
मारं ससेनं महतीं विजेत्वा।
सम्बोधिमग्गच्छि अनन्तञाणो,
लोकोत्तमो तं पणमामि बुद्धं॥४॥

३. वंदना

अतीत काल में जितने भी बुद्ध हुए हैं,
अनागत काल में जितने भी बुद्ध होंगे,
वर्तमान काल में जितने भी बुद्ध हैं,
उन सबों की मैं सदैव वंदना करता हूं॥१॥

अतीत काल के जो भी धर्म हैं,
अनागत काल में जो भी धर्म होंगे,
वर्तमान काल के जो भी धर्म हैं,
उन सबों की मैं सदैव वंदना करता हूं॥२॥

अतीत काल में जो भी आर्य-संघ हुए हैं,
अनागत काल में जो भी आर्य-संघ होंगे,
वर्तमान काल में जो भी आर्य-संघ हैं,
उन सबों की मैं सदैव वदना करता हूं॥३॥

जिन्होंने श्रेष्ठ बोधिवृक्ष के नीचे (ध्यानस्थ) बैठ कर,
महती सेना सहित मार को पराजित कर सम्बोधि प्राप्त की,
उन अनंतज्ञानी सर्व लोकों में श्रेष्ठ (भगवान) बुद्ध को
मैं प्रणाम करता हूं॥४॥

अट्ठङ्गिको अरियपथो जनानं,
मोक्खप्पवेसो उजुकोवमग्गो।
धम्मो अयं सन्तिकरो पणीतो,
निय्यानिको तं पणमामि धम्मं॥५॥

सङ्घो विसुद्धो वरदक्खिणेय्यो,
सन्तिन्द्रियो सब्बमलप्पहीनो।
गुणेहि-नेके हि समिद्धिपत्तो,
अनासवो तं पणमामि सङ्घं॥६॥

आरद्धविरिये पहितत्ते,
निच्चं दळ्ह-परक्कमे।
समग्गे सावके पस्स,
एतं बुद्धानवन्दनं॥७॥

इमाय धम्मानुधम्मपटिपत्तिया बुद्धं पूजेमि।
इमाय धम्मानुधम्मपटिपत्तिया धम्मं पूजेमि।
इमाय धम्मानुधम्मपटिपत्तिया सङ्घं पूजेमि॥८॥

अद्धा इमाय पटिपत्तिया
जाति-जरा-मरणम्हा
परिमुच्चिस्सामि॥९॥

यह जो लोगों के उपयुक्त आर्य अष्टांगिक मार्ग है, जो कि
मोक्ष प्राप्ति के लिए सीधा सरल मार्ग है, यह जो
शांतिदायक, उत्तम धर्म है और यह जो निर्वाण की ओर
ले जाने वाला है, ऐसे सद्धर्म को मैं प्रणाम करता हूं॥५॥

यह जो विशुद्ध, श्रेष्ठ, दक्षिणा देने योग्य, शांत-इंद्रिय,
समस्त मलों से विमुक्त, अनेक निष्पाप गुणों से समृद्ध,
आश्रवहीन (भिक्षु) संघ है – ऐसे (आर्य) संघ को मैं
प्रणाम करता हूं॥६॥

पुरुषार्थ युक्त विक्रमशील (निर्वाण के लिए) नित्य दृढ़
पराक्रम में संलग्न (इन) एकत्रीभूत श्रावकों को देखो। यही
बुद्धों की वंदना है॥७॥

सद्धर्म के इस मार्ग पर आरूढ़ होकर मैं बुद्ध की पूजा करता हूं।
सद्धर्म के इस मार्ग पर आरूढ़ होकर मैं धर्म की पूजा करता हूं।
सद्धर्म के इस मार्ग पर आरूढ़ होकरमैं सङ्घ कीपूजा करताहूं॥८॥

इस मार्ग पर आरूढ़ होकर
मैं निश्चय ही जन्म, जरा और
मृत्यु से मुक्त हो जाऊंगा॥९॥

४. तिसरण-सीलानं याचना

सिस्सो – ओकास, अहं भन्ते! तिसरणेन सह पञ्चसीलं धम्मं
याचामि। अनुग्गहं कत्वा सीलं देथ मे, भन्ते!
दुतियम्पि, अहं भन्ते! तिसरणेन सह पञ्चसीलं धम्मं
याचामि। अनुग्गहं कत्वा सीलं देथ मे, भन्ते!!
ततियम्पि, अहं भन्ते! तिसरणेन सह पञ्चसीलं धम्मं
याचामि। अनुग्गहं कत्वा सीलं देथ मे, भन्ते!!!

आचरियो – यमहं वदामि तं वदेहि।

सिस्सो – आम, भन्ते!

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स।

बुद्धं सरणं गच्छामि।
धम्मं सरणं गच्छामि।
सङ्घं सरणं गच्छामि।

दुतियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि सङ्घं सरणं गच्छामि।

ततियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि सङ्घं सरणं गच्छामि।

आचरियो – तिसरणगमनं सम्पुण्णं।

सिस्सो – आम, भन्ते।

४. त्रिशरण-शील-ग्रहण

शिष्य –अवकाशदीजिए, पूज्यवर! मैं त्रिशरण सहित पंचशील धर्म
कीयाचना करताहूं। अनुग्रह करकेमुझे शील दीजिए, पूज्यवर!
दूसरी बार भी, पूज्यवर! ० –
तीसरी बार भी, पूज्यवर! ० –

आचार्य – मैं जो कहूं, तुम वही कहो।

शिष्य – अच्छा, पूज्यवर!

नमस्कार है उन भगवान अर्हत सम्यक सम्बुद्ध को।
नमस्कार है उन भगवान अर्हत सम्यक सम्बुद्ध को।
नमस्कार है उन भगवान अर्हत सम्यक सम्बुद्ध को।
मैं बुद्ध की शरण जाता हूं।
मैं धर्म की शरण जाता हूं।
मैं सङ्घ की शरण जाता हूं।
दूसरी बार भी मैं बुद्ध की शरण जाता हूं।
दूसरी बार भी मैं धर्म की शरण जाता हूं।
दूसरी बार भी मैं सङ्घ की शरण जाता हूं।
तीसरी बार भी मैं बुद्ध की शरण जाता हूं।
तीसरी बार भी मैं धर्म की शरण जाता हूं।
तीसरी बार भी मैं सङ्घ की शरण जाता हूं।

आचार्य – त्रिशरण गमन सम्पूर्ण हुआ।

शिष्य – अच्छा, पूज्यवर!

५. पञ्चसील-समादान

१. पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
२. अदिन्नादाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
३. कामेसु-मिच्छाचारा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
४. मुसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
५. सुरा-मेरय-मज्ज-पमादट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।

आचरियो – तिसरणेन सद्धिं पञ्चसीलं धम्मं साधुकं सुरक्खितं कत्वा अप्पमादेन सम्पादेतब्बं।

सिस्सो – आम, भन्ते।

सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितत्ता!

५. पंचशील-ग्रहण

१. मैं प्राणी-हिंसा से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
२. मैं चोरी से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
३. मैं व्यभिचार से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
४. मैं मिथ्या-वचन से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
५. मैं शराब, मदिरा आदि नशे तथा प्रमादकारी वस्तुओं के सेवन से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।

आचार्य – त्रिशरण सहित पंचशील धर्म को भली प्रकार सुरक्षित रख कर अप्रमाद से इसका पालन करो!

शिष्य – अच्छा, पूज्यवर!

सारे प्राणी सुखी हों!

६. अट्ठङ्ग-उपोसथ-सीलानं याचना

सिस्सो – ओकास, अहं, भन्ते! तिसरणेन सद्धिं अट्ठङ्गसमन्नागतं
उपोसथसीलं धम्मं याचामि। अनुग्गहं कत्वा सीलं देथ मे, भन्ते!
दुतियम्पि, अहं, भन्ते! तिसरणेन सद्धिं अट्ठङ्गसमन्नागतं
उपोसथसीलं धम्मं याचामि। अनुग्गहं कत्वा सीलं देथ मे, भन्ते!
ततियम्पि, अहं, भन्ते! तिसरणेन सद्धिं अट्ठङ्गसमन्नागतं
उपोसथसीलं धम्मं याचामि। अनुग्गहं कत्वा सीलं देथ मे, भन्ते!

आचरियो – यमहं वदामि तं वदेहि।

सिस्सो – आम भन्ते!

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स।
बुद्धं सरणं गच्छामि।
धम्मं सरणं गच्छामि।
सङ्घं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि सङ्घं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि सङ्घं सरणं गच्छामि।

आचरियो – तिसरणगमनं सम्पुण्णं।

सिस्सो – आम, भन्ते।

६. अष्टांग-उपोसथ-शील-ग्रहण

शिष्य – अवकाश दीजिए, पूज्यवर! मैं त्रिशरण सहित
अष्टशील धर्म की याचना करता हूं। अनुग्रह करके मुझे
शील दीजिए, पूज्यवर!
दूसरी बार भी, पूज्यवर! ० –
तीसरी बार भी, पूज्यवर! ० –

आचार्य – मैं जो कहूं, तुम वही कहो।
शिष्य – अच्छा, पूज्यवर!

नमस्कार है उन भगवान अरहत सम्यक सम्बुद्ध को।
नमस्कार है उन भगवान अरहत सम्यक सम्बुद्ध को।
नमस्कार है उन भगवान अरहत सम्यक सम्बुद्ध को।

मैं बुद्ध की शरण जाता हूं।
मैं धर्म की शरण जाता हूं।
मैं सङ्घ की शरण जाता हूं।
दूसरी बार भी मैं बुद्ध की शरण जाता हूं।
दूसरी बार भी मैं धर्म की शरण जाता हूं।
दूसरी बार भी मैं सङ्घ की शरण जाता हूं।
तीसरी बार भी मैं बुद्ध की शरण जाता हूं।
तीसरी बार भी मैं धर्म की शरण जाता हूं।
तीसरी बार भी मैं सङ्घ की शरण जाता हूं।

आचार्य – त्रिशरण गमन सम्पूर्ण हुआ।
शिष्य – अच्छा, पूज्यवर!

७. अट्ठसील-समादान

१. पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
२. अदिन्नादाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
३. अब्रह्मचरिया वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
४. मुसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
५. सुरा-मेरय-मज्ज-पमादट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
६. विक ाल-भोजना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
७. नच्च-गीत-वादित-विसूक दस्सना माला-गंध-विलेपन-धारण-मण्डन-विभूसनट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
८. उच्चासयन-महासयना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।

आचरियो – तिसरणेन सद्धिं अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथ-सीलं धम्मं साधुकं सुरक्खितं क त्वा अप्पमादेन सम्पादेहि।

सिस्सो – आम, भन्ते!

सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितत्ता!

७. अष्टशील-ग्रहण

१. मैं प्राणी-हिंसा से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
२. मैं चोरी से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
३. मैं व्यभिचार से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
४. मैं मिथ्या-वचन से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
५. मैं शराब, मदिरा आदि नशे तथा प्रमादकारी वस्तुओं के सेवन से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
६. मैं विकाल भोजन से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
७. मैं नाच, गाने, बजाने और अशोभनीय खेल-तमाशे देखने तथा माला, सुगंध, लेप आदि धारण करने से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।
८. मैं (बहुत) ऊंची और बड़ी (विलासितामय राजसी) शय्या पर सोने से विरत रहने की शिक्षा ग्रहण करता हूं।

आचार्य – त्रिशरण सहित अष्ट-उपोसथ-शील धर्म को भली प्रकार सुरक्षित रख कर अप्रमाद से इसका पालन करो।

शिष्य – अच्छा, पूज्यवर!

सारे प्राणी सुखी हों!

८. देव-आह्वानसुत्त

समन्ता चक्क वालेसु,
अत्रागच्छन्तु देवता।
सद्धम्मं मुनिराजस्स,
सुणन्तु सग्ग-मोक्खदं॥

धम्म-सवणक ालो, अयं, भदन्ता।
धम्म-सवणक ालो, अयं, भदन्ता।
धम्म-सवणक ालो, अयं, भदन्ता॥

ये सन्ता सन्तचित्ता, तिसरण-सरणा,
एत्थ लोक न्तरे वा।
भुम्माभुम्मा च देवा, गुण-गण-गहणा,
ब्यावटा सब्बक ालं॥

एते आयन्तु देवा, वर-क नक -मये,
मेरुराजे वसन्तो।
सन्तो सन्तोसहेतुं, मुनिवर-वचनं,
सोतुमग्गं समग्गा॥

८. देव-आवाहन-सुत्त

समस्त चक्र वालोंके निवासी देवगण! यहां आएं और मुनिराज भगवान बुद्ध के स्वर्ग तथा मोक्षप्रदायक सद्धर्म को श्रवण करें!

धर्म श्रवण करने का यही (उपयुक्त) समय है, पूज्यवर!
धर्म श्रवण करने का यही (उपयुक्त) समय है, पूज्यवर!
धर्म श्रवण करने का यही (उपयुक्त) समय है, पूज्यवर!

जो शांत स्वभाव और शांत चित्त हैं,
त्रिशरण शरणागत हैं,
इस लोक एवं अन्य लोकों में रहने वाले हैं,
भूमि पर एवं आकाश में रहने वाले हैं,
जो सर्वदा गुणों को ग्रहण करने में ही रत हैं,

श्रेष्ठ स्वर्णमय सुमेरु पर्वतराज पर रहने वाले
ये सभी उपस्थित देवता संतोष के लिए
मुनिश्रेष्ठ के श्रेष्ठ वचन को सुनने के लिए
एक साथ आयें।

९. उग्घोसन-गाथा

जयो हि बुद्धस्स सिरीमतो अयं,
मारस्स च पापिमतो पराजयो।
उग्घोसयुं बोधिमण्डे पमोदिता,
जयं तदा नागगणा महेसिनो॥१॥

जयो हि बुद्धस्स सिरीमतो अयं,
मारस्स च पापिमतो पराजयो।
उग्घोसयुं बोधिमण्डे पमोदिता,
जयं तदा सुपण्णगणा महेसिनो॥२॥

जयो हि बुद्धस्स सिरीमतो अयं,
मारस्स च पापिमतो पराजयो।
उग्घोसयुं बोधिमण्डे पमोदिता,
जयं तदा देवगणा महेसिनो॥३॥

जयो हि बुद्धस्स सिरीमतो अयं,
मारस्स च पापिमतो पराजयो।
उग्घोसयुं बोधिमण्डे पमोदिता,
जयं तदा ब्रह्मगणा महेसिनो॥४॥

९. उद्‌घोषणा-गाथा

(जब महर्षि भगवान बुद्ध मार से संग्राम कर विजयी हुए तब)
बोधिमंड पर प्रमुदित नागों ने महर्षि की जय की उद्‌घोषणा की –
"श्रीसम्पन्न(महानुभाव) बुद्ध की विजय हो गयी है।
पापी मार की पराजय हो गयी है॥१॥

(जब महर्षि भगवान बुद्ध मार से संग्राम कर विजयी हुए तब)
बोधिमंड पर प्रमुदित गरुड़ों ने महर्षि की जय की उद्‌घोषणा की –
"श्रीसम्पन्न(महानुभाव) बुद्ध की विजय हो गयी है।
पापी मार की पराजय हो गयी है॥२॥

(जब महर्षि भगवान बुद्ध मार से संग्राम कर विजयी हुए तब)
बोधिमंड पर प्रमुदित देवताओं ने महर्षि कीजय कीउद्‌घोषणा की –
"श्रीसम्पन्न(महानुभाव) बुद्ध की विजय हो गयी है।
पापी मार की पराजय हो गयी है॥३॥

(जब महर्षि भगवान बुद्ध मार से संग्राम कर विजयी हुए तब)
बोधिमंड पर प्रमुदित ब्रह्माओं ने महर्षि कीजय कीउद्‌घोषणा की –
"श्रीसम्पन्न(महानुभाव) बुद्ध की विजय हो गयी है।
पापी मार की पराजय हो गयी है॥४॥

१०. उदान-गाथा

यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा,
आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
अथस्स कङ्खा वपयन्ति सब्बा,
यतो पजानाति सहेतु धम्मं॥१॥

यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा,
आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
अथस्स कङ्खा वपयन्ति सब्बा,
यतो खयं पच्चयानं अवेदी॥२॥

यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा,
आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
विधूपयं तिट्ठति मारसेनं,
सुरियो व ओभासयमन्तलिक्खं॥३॥

अनेक जाति संसारं,
सन्धाविस्सं अनिब्बिसं।
गहकारं गवेसन्तो,
दुक्खा जाति पुनप्पुनं॥४॥

गहकारक दिट्ठोसि, पुन गेहं न काहसि।
सब्बा ते फासुका भग्गा, गहकूटं विसङ्खितं।
विसङ्खारगतं चित्तं, तण्हानं खयमज्झगा'ति॥५॥

१०. उदान-गाथा

जब किसी तपस्वी और ध्यानी सत्पुरुष (श्रमण) ब्राह्मण को, सचमुच (बोधि-पक्षीय) धर्म उत्पन्न होते हैं, तो वह प्रत्ययों सहित धर्म को जान लेता है और इस कारण उसके समस्त शंका-संदेह दूर हो जाते हैं॥१॥

जब किसी तपस्वी और ध्यानी सत्पुरुष (श्रमण) ब्राह्मण को, सचमुच (बोधि-पक्षीय) धर्म उत्पन्न होते हैं, तो वह प्रत्ययों के निरोध-क्षय होने को जान लेता है और इस कारण उसके समस्त शंका-संदेह दूर हो जाते हैं॥२॥

जब किसी तपस्वी और ध्यानी सत्पुरुष (श्रमण) ब्राह्मण को, सचमुच (बोधि-पक्षीय) धर्म उत्पन्न होते हैं, तो वह मार-सेना का विध्वंस कर वैसे ही स्थित होता है जैसे कि अंधकार को विध्वंस कर अंतरिक्ष में सूर्य प्रकाशमान होता है॥३॥

अनेक जन्मों तक बिना रुके संसार में दौड़ता रहा। (इस कायारूपी) घर बनाने वाले की खोज करते हुए पुनः पुनः दुःखमय जन्म में पड़ता रहा॥४॥

हे गृहकारक !अब तू देख लिया गया है! अब तू पुनः घर नहीं बना सकेगा!तेरी सारी कड़ियां भग्न हो गयी हैं। घर का शिखर भी विशृंखलित हो गया है। चित्त संस्कार-रहित हो गया है, तृष्णा का समूल नाश हो गया है॥५॥

११. पटिच्चसमुप्पाद

अनुलोमं – अविज्जापच्चया सङ्खारा,
सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं,
विञ्ञाणपच्चया नाम-रूपं,
नाम-रूपपच्चया सळायतनं,
सळायतनपच्चया फस्सो,
फस्सपच्चया वेदना,
वेदनापच्चया तण्हा,
तण्हापच्चया उपादानं,
उपादानपच्चया भवो,
भवपच्चया जाति,
जातिपच्चया जरा-मरणं,
सोक-परिदेव-दुक्ख-दोमनस्सुपायासा सम्भवन्ति।
एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स समुदयो होति।

पटिलोमं – अविज्जायत्वेव असेस-विराग-निरोधा सङ्खारनिरोधो,
सङ्खारनिरोधा विञ्ञाणनिरोधो,
विञ्ञाणनिरोधा नाम-रूपनिरोधो,
नाम-रूपनिरोधा सळायतननिरोधो,
सळायतननिरोधा फस्सनिरोधो,
फस्सनिरोधा वेदनानिरोधो,
वेदनानिरोधा तण्हानिरोधो,
तण्हानिरोधा उपादाननिरोधो,
उपादाननिरोधा भवनिरोधो,
भवनिरोधा जातिनिरोधो,
जातिनिरोधा जरा-मरणं,
सोक-परिदेव-दुक्ख-दोमनस्सुपायासा निरुज्झन्ति।
एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स निरोधो होति॥

११. प्रतीत्य-समुत्पाद

अनुलोम – अविद्या के प्रत्यय (कारण) से संस्कार,
संस्कार के प्रत्यय से विज्ञान,
विज्ञान के प्रत्यय से नाम-रूप,
नाम-रूप के प्रत्यय से छः-आयतन,
छः-आयतनों के प्रत्यय से स्पर्श,
स्पर्श के प्रत्यय से वेदना,
वेदना के प्रत्यय से तृष्णा,
तृष्णा के प्रत्यय से उपादान,
उपादान के प्रत्यय से भव,
भव के प्रत्यय से जाति (जन्म),
जाति के प्रत्यय से बुढ़ापा, मरना, शोक करना, रोना, पीटना, दुःखित, बेचैन और परेशान होना होता है। इस प्रकार सारे के सारे दुःख-समुदाय का उदय होता है।

प्रतिलोम – अविद्या के संपूर्णतया निरुद्ध हो जाने से संस्कारका निरोध हो जाता है; संस्कारके निरुद्ध हो जाने से विज्ञान का निरोध हो जाता है; विज्ञान के निरुद्ध हो जाने से नाम-रूप का निरोध हो जाता है; नाम-रूप के निरुद्ध हो जाने से छह आयतनों का निरोध हो जाता है; छह आयतनों के निरुद्ध हो जाने से स्पर्श का निरोध हो जाता है; स्पर्श के निरुद्ध हो जाने से वेदना का निरोध हो जाता है; वेदना के निरुद्ध हो जाने से तृष्णा का निरोध हो जाता है; तृष्णा के निरुद्ध हो जाने से उपादान का निरोध हो जाता है; उपादान के निरुद्ध हो जाने से भव का निरोध हो जाता है; भव के निरुद्ध हो जाने से जन्म का निरोध हो जाता है; जन्म के निरुद्ध हो जाने से बुढापा होना, मरना, शोक करना,रोना, पीटना, दुःखित होना, बेचैन और परेशान होना निरुद्ध हो जाते हैं। इस प्रकार सारे के सारे दुःख-समुदाय का निरोध हो जाता है।

१२. पट्ठानपच्चयुद्देस

हेतु-पच्चयो। आरम्मण-पच्चयो।

अधिपति-पच्चयो। अनन्तर-पच्चयो।

समनन्तर-पच्चयो। सहजात-पच्चयो।

अञ्ञमञ्ञ-पच्चयो। निस्सय-पच्चयो।

उपनिस्सय-पच्चयो। पुरेजात-पच्चयो।

पच्छाजात-पच्चयो। आसेवन-पच्चयो।

क म्म-पच्चयो। विपाक -पच्चयो।

आहार-पच्चयो। इन्द्रिय-पच्चयो।

झान-पच्चयो। मग्ग-पच्चयो।

सम्पयुत्त-पच्चयो। विप्पयुत्त-पच्चयो।

अत्थि-पच्चयो। नत्थि-पच्चयो।

विगत-पच्चयो। अविगत-पच्चयो।

१२. पट्ठान-प्रत्यय-उद्देश्य

हेतु-प्रत्यय। आलंबन-प्रत्यय।

अधिपति-प्रत्यय। अनंतर-प्रत्यय।

समानांतर-प्रत्यय। सहजात-प्रत्यय।

अन्योन्य-प्रत्यय। निश्रय-प्रत्यय।

उपनिश्रय-प्रत्यय। पुरेजात-प्रत्यय।

पश्चात-जात-प्रत्यय। आसेवन-प्रत्यय।

क र्म-प्रत्यय। विपाक -प्रत्यय।

आहार-प्रत्यय। इन्द्रिय-प्रत्यय।

ध्यान-प्रत्यय। मार्ग-प्रत्यय।

संप्रयुक्त-प्रत्यय। विप्रयुक्त-प्रत्यय।

अस्ति-प्रत्यय। नास्ति-प्रत्यय।

विगत-प्रत्यय। अविगत-प्रत्यय।

१३. जयमङ्गल-अट्ठगाथा

बाहुं सहस्समभिनिम्मित सावुधन्तं,
गिरिमेखलं उदितघोरससेनमारं।
दानादि-धम्मविधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमङ्गलानि॥१॥

मारातिरेक मभियुज्झितसब्बरत्तिं,
घोरम्पनालवक मक्खमथद्धयक्खं।
खन्ती सुदन्तविधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमङ्गलानि॥२॥

नालागिरिं गजवरं अतिमत्तभूतं,
दावग्गि-चक्क मसनीव सुदारुणन्तं।
मेत्तम्बुसेक -विधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमङ्गलानि॥३॥

उक्खित्त खग्गमतिहत्थ-सुदारुणन्तं,
धावन्ति योजनपथङ्गुलिमालवन्तं।
इद्धीभिसङ्खतमनो जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमङ्गलानि॥४॥

१३. जयमंगल-अट्ठगाथा

गिरिमेखला नामक गजराज पर सवार अपनी ऋद्धि से निर्मित सहस्र भुजाओं में शस्त्र लिए मार को उसकी भीषण सेना सहित जिन मुनीन्द्र (भगवान बुद्ध) ने अपनी दान आदि पारमिताओं के धर्मबल से जीत लिया, उनके प्रताप (तेज) से तुम्हारी जय हो! तुम्हारा मंगल हो!!॥१॥

मार से भी बढ़-चढ़ कर सारी रात युद्ध करनेवाले, अत्यंत दुर्धर्ष और कठोर हृदय आलवक नामक यक्ष को जिन मुनीन्द्र (भगवान बुद्ध) ने अपनी शांति और संयम के बल से जीत लिया, उनके प्रताप (तेज) से तुम्हारी जय हो! तुम्हारा मंगल हो!!॥२॥

दावाग्नि-चक्र अथवा विद्युत की भांति अत्यंत दारुण और विपुल मदमत्त नालागिरि गजराज को जिन मुनीन्द्र (भगवान बुद्ध) ने अपने मैत्री रूपी जल की वर्षा से जीत लिया, उनके प्रताप (तेज) से तुम्हारी जय हो! तुम्हारा मंगल हो!!॥३॥

हाथ में तलवार उठा कर योजन तक दौड़ने वाले अत्यंत भयावह अंगुलिमाल को जिन मुनीन्द्र (भगवान बुद्ध) ने अपने ऋद्धिबल से जीत लिया, उनके प्रताप (तेज) से तुम्हारी जय हो! तुम्हारा मंगल हो!!॥४॥

क त्वान क टुमुदरं इव गब्भिनीया,
चिञ्चाय दुट्ठवचनं जनक ाय-मज्झे।
सन्तेन सोमविधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमङ्गलानि॥५॥

सच्चं विहाय मतिसच्चक-वादके तुं,
वादाभिरोपितमनं अतिअन्धभूतं।
पञ्ञापदीपजलितो जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमङ्गलानि॥६॥

नन्दोपनन्द भुजगं विविधं महिद्धिं,
पुत्तेन थेर भुजगेन दमापयन्तो।
इद्धूपदेसविधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमङ्गलानि॥७॥

दुग्गाहदिट्ठिभुजगेन सुदट्ठ-हत्थं,
ब्रह्मं विसुद्धिजुतिमिद्धि बक ाभिधानं।
ञाणागदेन विधिना जितवा मुनिन्दो,
तं तेजसा भवतु ते जयमङ्गलानि॥८॥

पेट पर काठ बांध कर गर्भिणी का स्वांग करने वाली चिञ्चा के द्वारा जनता के मध्य कहे गये अपशब्दों को जिन मुनीन्द्र (भगवान बुद्ध) ने अपने शांत और सौम्य बल से जीत लिया, उनके प्रताप (तेज) से तुम्हारी जय हो! तुम्हारा मंगल हो!!॥५॥

सत्य-विमुख, असत्यवाद के पोषक, अभिमानी, वादविवाद- परायण और अहंकार से अत्यंत अंधे हुए सच्चक नामक परिव्राजक को जिन मुनीन्द्र (भगवान बुद्ध) ने प्रज्ञा-प्रदीप जला कर जीत लिया, उनके प्रताप (तेज) से तुम्हारी जय हो! तुम्हारा मंगल हो!!॥६॥

विविध प्रकार की महान ऋद्धियों से संपन्न नन्दोपनन्द नामक भुजंग को अपने पुत्र (शिष्य) महामौद्गल्यायन स्थविर द्वारा अपनी ऋद्धि-शक्ति और उपदेश के बल से दमित कराते हुए जिन मुनीन्द्र (भगवान बुद्ध) ने जीत लिया, उनके प्रताप (तेज) से तुम्हारी जय हो! तुम्हारा मंगल हो!!॥७॥

मिथ्यादृष्टि रूपी भयानक सर्प द्वारा डसे गये, शुद्ध- ज्योतिर्मय ऋद्धिसम्पन्न बक ब्रह्मा को जिन मुनीन्द्र (भगवान बुद्ध) ने ज्ञान रूपी औषध से जीत लिया, उनके प्रताप (तेज) से तुम्हारी जय हो! तुम्हारा मंगल हो!!॥८॥

१४. मङ्गलसुत्त

यं मङ्गलं द्वादसहि चिन्तयिंसु सदेवका।
सोत्थानं नाधिगच्छन्ति अट्ठतिंसञ्च मङ्गलं॥

देसितं देवदेवेन सब्बपापविनासनं।
सब्बलोक-हितत्थाय मङ्गलं तं भणामहे॥

एवं मे सुतं –

एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिक स्स आरामे। अथ खो अञ्ञतरा देवता अभिक्क न्ताय रत्तिया, अभिक्क न्तवण्णा के वलक प्पं जेतवनं ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एक मन्तं अट्ठासि। एक मन्तं ठिता खो सा देवता भगवन्तं गाथाय अज्झभासि : –

बहू देवा मनुस्सा च, मङ्गलानि अचिन्तयुं।
आक ङ्खमाना सोत्थानं, ब्रूहि मङ्गलमुत्तमं॥१॥

(भगवा) –

असेवना च बालानं, पण्डितानञ्च सेवना।
पूजा च पूजनीयानं, एतं मङ्गलमुत्तमं॥२॥

पतिरूपदेसवासो च, पुब्बे च क तपुञ्ञता।
अत्त-सम्मापणिधि च, एतं मङ्गलमुत्तमं॥३॥

१४. मंगल-सुत्त

जिन मंगल धर्मों के संबंध में बारह वर्षों तक (मनुष्य तथा) देवताओं सहित लोक में विचार किया गया, किंतु उनका ठीक से ज्ञान न हो सका, उन अड़तीस मंगलों का देवाधिदेव (भगवान बुद्ध) ने सब पापों के विनाश के लिए उपदेश दिया।

सर्व लोक-हित के लिए हम उन मंगल धर्मों को कह रहे हैं।

ऐसा मैंने सुना –

एक समय भगवान श्रावस्ती नगर के जेतवन उद्यान में (श्रेष्ठी) अनाथपिंडिक के (द्वारा बनवाये) संघाराम में विहार कर रहे थे। उस समय कोई एक दिव्य कांतिमान देवता अधिक रात्रि बीत जाने पर संपूर्ण जेतवन को (अपने दिव्यालोक से) आलोकित कर, जहां भगवान थे, वहां उनके समीप उपस्थित हुआ। उपस्थित हो, भगवान को अभिवादन कर, एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़े हो उस देवता ने गाथा में भगवान से कहा: –

कल्याण की कामना करते हुए कितने ही देव और मनुष्य मंगलधर्मों के संबंध में चिंतन करते रहे हैं। आप ही कृपा कर बताइये कि वास्तविक उत्तम मंगल क्या हैं? १॥

(भगवान ने भी गाथा में ही कहा) : –

मूर्खों की संगति न करना, पंडितों (ज्ञानियों) की संगति करना और पूजनीय की पूजा करना – यह उत्तम मंगल है॥२॥

उपयुक्त स्थान में निवास करना, पूर्व जन्मों का संचित-पुण्य वाला होना और अपने आप को सम्यक रूप से समाहित रखना – यह उत्तम मंगल है॥३॥

बाहुसच्चञ्च सिप्पञ्च, विनयो च सुसिक्खितो।
सुभासिता च या वाचा, एतं मङ्गलमुत्तमं॥४॥

माता-पितु-उपट्ठानं, पुत्तदारस्स सङ्गहो।
अनाकु ला च क म्मन्ता, एतं मङ्गलमुत्तमं॥५॥

दानञ्च धम्मचरिया च, ञातक ानञ्च सङ्गहो।
अनवज्जानि क म्मानि, एतं मङ्गलमुत्तमं॥६॥

आरती विरती पापा, मज्जपाना च संयमो।
अप्पमादो च धम्मेसु, एतं मङ्गलमुत्तमं॥७॥

गारवो च निवातो च, सन्तुट्ठि च क तञ्ञुता।
क ालेन धम्मस्सवनं, एतं मङ्गलमुत्तमं॥८॥

खन्ती च सोवचस्सता, समणानञ्च दस्सनं।
क ालेन धम्मसाक च्छा, एतं मङ्गलमुत्तमं॥९॥

तपो च ब्रह्मचरियञ्च, अरियसच्चान-दस्सनं।
निब्बानसच्छिकि रिया च, एतं मङ्गलमुत्तमं॥१०॥

फु ट्ठस्स लोक धम्मेहि, चित्तं यस्स न क म्पति।
असोकं विरजं खेमं, एतं मङ्गलमुत्तमं॥११॥

एतादिसानि क त्वान, सब्बथमपराजिता।
सब्बत्थसोत्थिं गच्छन्ति, तं तेसं मङ्गलमुत्तमं'ति॥१२॥

अनेक विद्याओं को अर्जित करना, शिल्प-कलाओं को सीखना, विनीत होना, सुशिक्षित होना और (वार्तालाप में) सुभाषी होना –यह उत्तम मंगल है॥४॥

माता-पिता की सेवा करना, पुत्र-स्त्री (परिवार) का पालन-पोषण करना और आकुल-उद्विग्नन करनेवाला (निष्पाप) व्यवसाय करना– यह उत्तम मंगल है॥५॥

दान देना, धर्म का आचरण करना, बंधु-बांधवों की सहायता करना और अनवर्जित कर्मही करना –यह उत्तम मंगल है॥६॥

तन-मन से पापों का त्याग करना, मदिरा-सेवन से दूर रहना और कुशलधर्मों के पालन में सदा सचेत रहना –यह उत्तम मंगल है॥७॥

(पूजनीय व्यक्तियों को) गौरव देना, सदा विनीत रहना, संतुष्ट रहना, दूसरों द्वारा किए गये उपकार को स्वीकार करना और उचित समय पर धर्म-श्रवण करना –यह उत्तम मंगल है॥८॥

क्षमाशील होना, आज्ञाकारी होना, श्रमणों का दर्शन करना और उचित समय पर धर्म-चर्चा करना –यह उत्तम मंगल है॥९॥

तप, ब्रह्मचर्य का पालन करना, आर्य-सत्यों का दर्शन करना और निर्वाण का साक्षात्कार करना –यह उत्तम मंगल है॥१०॥

(लाभ-हानि, यश-अपयश, निंदा-प्रशंसा और सुख-दुख इन) लोक-धर्मों के स्पर्श से जिसका चित्त कंपित नहीं होता, निःशोक, निर्मल और निर्भय रहता है – यह उत्तम मंगल है॥११॥

इस प्रकार के कार्य करके (ये लोग) सर्वत्र अपराजित हो, सर्वत्र कल्याण-लाभी होते हैं। उन मंगल करनेवालों के यही उत्तम मंगल हैं॥१२॥

१५. रतनसुत्त

कोटीसतसहस्सेसु, चक्कवालेसु देवता।
यस्साणं पटिगण्हन्ति, यञ्च वेसालिया पुरे॥
रोगा-मनुस्स-दुब्भिक्खं, सम्भूतं तिविधं भयं।
खिप्पमन्तरधापेसि, परित्तं तं भणामहे॥
यानीध भूतानि समागतानि,
भुम्मानि वा यानि व अन्तलिक्खे।
सब्बेव भूता सुमना भवन्तु,
अथोपि सक्कच्च सुणन्तु भासितं॥१॥

तस्मा हि भूता निसामेथ सब्बे,
मेत्तं करोथ मानुसिया पजाय।
दिवा च रत्तो च हरन्ति ये बलिं,
तस्मा हि ने रक्खथ अप्पमत्ता॥२॥
यं किञ्चि वित्तं इध वा हुरं वा,
सग्गेसु वा यं रतनं पणीतं।
न नो समं अत्थि तथागतेन,
इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं।
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥३॥
खयं विरागं अमतं पणीतं,
यदज्झगा सक्यमुनी समाहितो।
न तेन धम्मेन समत्थि किञ्चि,
इदम्पि धम्मे रतनं पणीतं।
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥४॥

१५. रतन-सुत्त

(एक बार जब वैशाली नगरी भयंकर रोगों, अमानवी उपद्रवों और दुर्भिक्ष-पीड़ाओं से संतप्त हो उठी, तो इन तीनों प्रकार के दुःखों का शमन करने के लिए महास्थविर आनंद ने भगवान के अनंत गुणों का स्मरण किया।)

शत-सहस्र-कोटिचक्र वालों के वासी सभी देवगण जिसके प्रताप को स्वीकार करते हैं तथा जिसके प्रभाव से वैशाली नगरी रोग, अमानवी उपद्रव और दुर्भिक्ष से उत्पन्न त्रिविध भय से तत्काल मुक्त हो गयी थी, उस परित्राण को कहरहे हैं।

इस समय धरती या आकाश में रहने वाले जो भी प्राणी (भूतादि) उपस्थित हैं, वे सौमनस्य-पूर्ण हों (प्रसन्न-चित्त हों) और इस कथन (धर्म-वाणी) को आदर के साथ सुनें॥१॥

(हे उपस्थित प्राणी) इस प्रकार (आप) सब ध्यान से सुनें और मनुष्यों के प्रति मैत्री-भाव रखें। जिन मनुष्यों से (आप) दिन-रात बलि (भेट-पूजा-प्रसाद) ग्रहण करते हैं, प्रमाद रहित होकर उनकी रक्षा करें॥२॥

इस लोक में अथवा अन्य लोकों में जो भी धन-संपत्ति है और स्वर्गों में जो भी अमूल्य-रत्न हैं, उनमें से कोई भी तो तथागत (बुद्ध) के समान (श्रेष्ठ) नहीं है। (सचमुच) यह भी बुद्ध में उत्तम गुण-रत्न है –इस सत्य कथन के प्रभाव से कल्याण हो॥३॥

समाहित-चित्त से शाक्य-मुनि भगवान बुद्ध ने जिस राग-विमुक्त आश्रव-हीन श्रेष्ठ अमृत को प्राप्त किया था, उस लोकोत्तर निर्वाण-धर्म के समान अन्य कुछ भी नहीं है। (सचमुच) यह भी धर्म में उत्तम रत्न है –इस सत्य कथन के प्रभाव से कल्याण हो॥४॥

यं बुद्धसेट्ठो परिवण्णयी सुचिं,
समाधिमानन्तरिक ञ्ञमाहु।
समाधिना तेन समो न विज्जति,
इदम्पि धम्मे रतनं पणीतं।
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥५॥

ये पुग्गला अट्ठ सतं पसत्था,
चत्तारि एतानि युगानि होन्ति।
ते दक्खिणेय्या सुगतस्स सावका,
एतेसु दिन्नानि महप्फलानि,
इदम्पि सङ्घे रतनं पणीतं,
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥६॥

ये सुप्पयुत्ता मनसा दल्हेन,
निक्कामिनो गोतमसासनम्हि।
ते पत्तिपत्ता अमतं विगय्ह,
लद्धा मुधा निब्बुतिं भुञ्जमाना।
इदम्पि सङ्घे रतनं पणीतं,
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥७॥

यथिन्दखीलो पठविं सितो सिया,
चतुब्भि वातेहि असम्पकम्पियो।
तथूपमं सप्पुरिसं वदामि,
यो अरियसच्चानि अवेच्च पस्सति।
इदम्पि सङ्घे रतनं पणीतं,
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥८॥

जिस परम विशुद्ध आर्य-मार्गिक समाधि की प्रशंसा स्वयं भगवान बुद्ध ने की है और जिसे "आनन्तरिक" याने तत्काल फलदायी कहा है, उसके समान अन्य कोई भी तो समाधि नहीं है। (सचमुच) यह भी धर्म में उत्तम रत्न है –इस सत्य के प्रभाव से कल्याण हो ॥५॥

जिन आठ प्रकार के आर्य (पुद्गल) व्यक्तियों की संतों ने प्रशंसा की है, (मार्ग और फल की गणना से) जिनके चार जोड़े होते हैं, वे ही बुद्ध के श्रावक-संघ (शिष्य) दक्षिणा के उपयुक्त पात्र हैं। उन्हें दिया गया दान महाफलदायी होता है। (सचमुच) यह भी संघ में उत्तम रत्न है –इस सत्य के प्रभाव से कल्याण हो ॥६॥

जो (आर्य पुद्गल) भगवान बुद्ध के (साधना) शासन में दृढ़ता-पूर्वक एकाग्रचित्त और वितृष्ण हो कर संलग्न हैं, तथा जिन्होंने सहज ही अमृत में गोता लगा कर अमूल्य निर्वाण-रस का आस्वादन कर लिया है और प्राप्तव्य को प्राप्त कर लिया है (उत्तम अरहंत फल को पा लिया है)। (सचमुच) यह भी संघ में उत्तम रत्न है- इस सत्य के प्रभाव से कल्याण हो ॥७॥

जिस प्रकार पृथ्वी में (दृढ़ता से) गड़ा हुआ इंद्र-कील (नगर-द्वार-स्तंभ) चारों ओर के पवन-वेग से भी प्रकंपित नहीं होता, उस प्रकार के व्यक्ति को ही मैं सत्पुरुष कहता हूं, जिसने (भगवान के साधना-पथ पर चल कर) आर्यसत्यों का सम्यक दर्शन (साक्षात्कार) कर उन्हें स्पष्टरूप से जान लिया है; (वह आर्य-पुद्गल भी प्रत्येक अवस्था में अविचलित रहता है)। (सचमुच) यह भी (आर्य) संघ में उत्तम रत्न है –इस सत्य के प्रभाव से कल्याण हो ॥८॥

ये अरियसच्चानि विभावयन्ति,
गम्भीरपञ्ञेन सुदेसितानि।
किञ्चापि ते होन्ति भुसप्पमत्ता,
न ते भवं अट्ठममादियन्ति।
इदम्पि सङ्घे रतनं पणीतं,
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥९॥

सहावस्स दस्सन-सम्पदाय,
तयस्सु धम्मा जहिता भवन्ति।
सक्कायदिट्ठि विचिकिच्छितं च,
सीलब्बतं वा पि यदत्थि किञ्चि॥१०॥

चतूहपायेहि च विप्पमुत्तो,
छच्चाभिठानानि अभब्बो कातुं।
इदम्पि सङ्घे रतनं पणीतं,
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥११॥

किञ्चापिसो कम्मंकरोतिपापकं,
कायेन वाचा उद चेतसा वा।
अभब्बो सो तस्स पटिच्छादाय,
अभब्बता दिट्ठपदस्स वुत्ता।
इदम्पि सङ्घे रतनं पणीतं,
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥१२॥

वनप्पगुम्बे यथा फुस्सितग्गे,
गिम्हानमासे पठमस्मिं गिम्हे।
तथूपमं धम्मवरं अदेसयि,
निब्बानगामिं परमं हिताय।
इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं,
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥१३॥

जिन्होंने गंभीर-प्रज्ञावान भगवान बुद्ध के द्वारा उपदिष्ट आर्यसत्यों का भली प्रकार साक्षात्कार कर लिया है, वे (स्रोतापन्न) यदि किसी कारणसे बहुत प्रमादी भी हो जायं (और साधना के अभ्यास में सतत तत्पर न भी रहें) तो भी आठवां जन्म ग्रहण नहीं करते। (अधिक से अधिक सातवें जन्म में उनकी मुक्ति निश्चित है।) (सचमुच) यह भी (आर्य) संघ में उत्तम रत्न है – इस सत्य के प्रभाव से कल्याण हो॥९॥

दर्शन-प्राप्ति (स्रोतापन्न फलप्राप्ति) के साथ ही उसके (स्रोतापन्न व्यक्ति के) तीन बंधन छूट जाते हैं – सत्कायदृष्टि (आत्म सम्मोह), विचिकित्सा (संशय), शीलव्रत परामर्श (विभिन्न व्रतों आदि कर्मकांडोंसे चित्तशुद्धि होने का विश्वास) अथवा अन्य जो कुछभी ऐसे बंधन हों ...॥१०॥

वह चार अपाय गतियों (निरय लोकों) से पूरी तरह मुक्त हो जाता है। छह घोर पाप कर्मों (मातृ-हत्या, पितृ-हत्या, अर्हंत-हत्या, बुद्ध का रक्तपात, संघ-भेद एवं मिथ्या आचार्यों के प्रति श्रद्धा) को कभी नहीं करता। (सचमुच) यह भी (आर्य) संघ में उत्तम रत्न है –इस सत्य के प्रभाव से कल्याणहो॥११॥

भले ही वह (स्रोतापन्न व्यक्ति) काय, वचन अथवा मन से कोईपाप कर्म कर भी ले तो उसे छिपा नहीं सकता। (भगवान ने कहा है) निर्वाण का साक्षात्कार कर लेने वाला अपने दुष्कृतकर्मको छिपाने में असमर्थ है। (सचमुच) यह भी (आर्य) संघ में उत्तम रत्न है –इस सत्य के प्रभाव से कल्याणहो॥१२॥

ग्रीष्म ऋतुके प्रारंभिक मास में जिस प्रकार सघन वन प्रफुल्लित वृक्षशिखरों से शोभायमान होता है, उसी प्रकार भगवान बुद्ध ने श्रेष्ठ धर्म का उपदेश दिया जो निर्वाण की ओर ले जाने वाला तथा परम हितकारी (यह लोकोत्तरधर्म शोभायमान) है। (सचमुच) यह भी बुद्ध में उत्तम रत्न है – इस सत्य के प्रभाव से कल्याण हो॥१३॥

वरो वरञ्ञू वरदो वराहरो,
अनुत्तरो धम्मवरं अदेसयि।
इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं,
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥१४॥

खीणं पुराणं नवं नत्थि सम्भवं,
विरत्तचित्तायतिके भवस्मिं।
ते खीणबीजा अविरूळ्हिछन्दा,
निब्बन्ति धीरा यथा'यं पदीपो।
इदम्पि सङ्घे रतनं पणीतं,
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥१५॥

यानीध भूतानि समागतानि,
भुम्मानि वा यानि'व अन्तलिक्खे।
तथागतं देवमनुस्सपूजितं,
बुद्धं नमस्साम सुवत्थि होतु॥१६॥

यानीध भूतानि समागतानि,
भुम्मानि वा यानि'व अन्तलिक्खे।
तथागतं देवमनुस्सपूजितं,
धम्मं नमस्साम सुवत्थि होतु॥१७॥

यानीध भूतानि समागतानि,
भुम्मानि वा यानि'व अन्तलिक्खे।
तथागतं देवमनुस्सपूजितं,
सङ्घं नमस्साम सुवत्थि होतु॥१८॥

श्रेष्ठ ने, श्रेष्ठ को जानने वाले, श्रेष्ठ को देने वाले तथा श्रेष्ठ को लाने वाले श्रेष्ठ (बुद्ध) ने अनुत्तर धर्म की देशना की। यह भी बुद्ध में उत्तम रत्न है। इस सत्य के प्रभाव से कल्याण हो ॥१४॥

जिनके सारे पुराने कर्म क्षीण हो गये हैं और नये कर्मों की उत्पत्ति नहीं होती; पुनर्जन्म में जिनकी आसक्ति समाप्त हो गयी है, वे क्षीण-बीज (अरहंत) तृष्णा-विमुक्त हो गये हैं। वे इसी प्रकार निर्वाण को प्राप्त होते हैं जैसे (कि तेल समाप्त होने पर) यह प्रदीप। (सचमुच) यह भी (आर्य) संघ में श्रेष्ठ रत्न है –इस सत्य के प्रभाव से कल्याण हो ॥१५॥

इस समय धरती या आकाश में रहने वाले जो भी प्राणी यहां उपस्थित हैं, हम सभी समस्त देवों और मनुष्यों द्वारा पूजित तथागत बुद्ध को नमस्कार करते हैं, कल्याण हो ॥१६॥

इस समय धरती या आकाश में रहने वाले जो भी प्राणी यहां उपस्थित हैं, हम सभी समस्त देवों और मनुष्यों द्वारा पूजित तथागत और धर्म को नमस्कार करते हैं, कल्याण हो ॥१७॥

इस समय धरती या आकाश में रहने वाले जो भी प्राणी यहां उपस्थित हैं, हम सभी समस्त देवों और मनुष्यों द्वारा पूजित तथागत और संघ को नमस्कार करते हैं, कल्याण हो ॥१८॥

१६. करणीयमेत्त-सुत्त

यस्सानुभावतो यक्खा, नेव दस्सेन्ति भीसनं।
यञ्हि चेवानुयुञ्जन्तो, रत्तिन्दिवमतन्दितो॥

सुखं सुपति सुत्तो च, पापं किञ्चि न पस्सति।
एवमादि गुणूपेतं, परित्तं तं भणामहे॥

करणीयमत्थकुसलेन, यन्त सन्तं पदं अभिसमेच्च।
सक्को उजू च सुहुजू च, सुवचो चस्स मुदु अनतिमानी॥१॥

सन्तुस्सको च सुभरो च, अप्पकिच्चो च सल्लहुकवुत्ति।
सन्तिन्द्रियो च निपको च, अप्पगब्भो कुलेस्वननुगिद्धो॥२॥

न च खुद्दं समाचरे किञ्चि, येन विञ्ञू परे उपवदेय्युं।
सुखिनो वा खेमिनो होन्तु, सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितत्ता॥३॥

ये केचि पाणभूतत्थि, तसा वा थावरा अनवसेसा।
दीघा वा येव महन्ता वा, मज्झिमा रस्सकाअणुकथूला॥४॥

दिट्ठा वा ये व अदिट्ठा, ये च दूरे वसन्ति अविदूरे।
भूता व सम्भवेसी वा, सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितत्ता॥५॥

१६. करणीयमेत्त-सुत्त

जिसके प्रभाव से यक्ष अपना भीषण भय-रूप नहीं दिखा सकते और जिसके दिन-रात के बिना थके अभ्यास करने से सोया हुआ सुख की नींद सोता है, तथा सोया हुआ व्यक्ति कोई दुःस्वप्न (पाप) नहीं देखता है इत्यादि, इस प्रकार के गुणों से युक्त उस परित्राण को कह रहे हैं : –

जो परमपद निर्वाण प्राप्त कर अर्थकुशल है उस समझदार व्यक्ति को चाहिए कि वह सुयोग्य बने, सरल बने, अति सरल बने, सुभाषी बने, मृदु स्वभाव वाला बने और निरभिमानी बने॥१॥

वह सदा संतुष्ट रहे, सहज सुपोष्य रहे, अनेक कामों में व्यस्त न रहे, सादगी का जीवन अपनाये, शांत इन्द्रिय बने, परिपक्व प्रज्ञावान बने, लापरवाह न रहे, कुलों में अत्यंत आसक्त न रहे॥२॥

वह यत्किंचित भी दुराचरण न करे जिसके कारण अन्य विज्ञजन उसे बुरा कहें। वह अपने मन में सदैव यही मैत्री-भावना करे –सारे प्राणी सुखी हों! निर्भय, क्षेमयुक्त हों! सभी सत्व सुख-लाभ करें॥३॥

वे प्राणी चाहे स्थावर हों या जंगम, दीर्घ (देहधारी) हों या महान (देहधारी), मध्यम (देहधारी) हों, या ह्रस्व (देहधारी), सूक्ष्म (देहधारी) हों या स्थूल (देहधारी) ...॥४॥

दृश्य हों या अदृश्य, सुदूरवासी हों या समीपवासी, उत्पन्न हों या उत्पन्न होने वाले हों, वे सभी सत्त्व सुखपूर्वक रहें॥५॥

न परो परं निकुब्बेथ, नातिमञ्ञेथ कत्थचि नं कञ्चि।
ब्यारोसना पटिघसञ्ञा, नाञ्ञमञ्ञस्स दुक्खमिच्छेय्य॥६॥

माता यथा नियं पुत्तं, आयुसा एकपुत्तमनुरक्खे।
एवम्पि सब्बभूतेसु, मानसं भावये अपरिमाणं॥७॥

मेत्तं च सब्बलोकस्मिं, मानसं भावये अपरिमाणं।
उद्धं अधो च तिरियञ्च, असम्बाधं अवेरमसपत्तं॥८॥

तिट्ठं चरं निसिन्नो वा, सयानो वा यावतस्स विगतमिद्धो।
एतं सतिं अधिट्ठेय्य, ब्रह्ममेतं विहारमिधमाहु॥९॥

दिट्ठिं च अनुपग्गम्म, सीलवा दस्सनेन सम्पन्नो।
कामेसु विनेय्य गेधं, न हि जातु गब्भसेय्यं पुनरेती ति॥१०॥

एक दूसरे को नहीं ठगे, किसी का कहीं भी अनादर न करे, क्रोध या वैमनस्य के वशीभूत होकर एक दूसरे के दुःख की कामना न करे॥६॥

जिस प्रकार जीवन के मूल्य पर भी मां अपने इकलौते पुत्र की रक्षा करती है, उसी प्रकार (वह भी) समस्त प्राणियों के प्रति अपने मन में अपरिमित मैत्री-भाव बढ़ाये॥७॥

वह अपरिमित मैत्री-भावना बिना किसी बाधा, घृणा और शत्रुता के, ऊपर-नीचे और आड़े-तिरछे समस्त लोकों में व्याप्त करे॥८॥

चाहे खड़ा हो, चलता हो, बैठा हो या लेटा हो, जब तक निद्रा के अधीन नहीं है, स्मृतिमान हो, इस अपरिमित मैत्री की भावना करे। इसी को ब्रह्म-विहार कहते हैं॥९॥

इस प्रकार वह (मैत्री ब्रह्म-विहार करने वाला साधक) किसी मिथ्या-दृष्टि में नहीं पड़ता। वह शील और प्रज्ञा-दृष्टि संपन्न हो जाता है। काम-तृष्णा का नाश कर लेता है और पुनः गर्भ में नहीं आता अर्थात् गर्भ-शयन (पुनर्जन्म) के दुःख से नितांत मुक्ति पा लेता है॥१०॥

१७. मेत्ता-भावना

अहं अवेरो होमि, अब्यापज्झो होमि।
अनीघो होमि, सुखी अत्तानं परिहरामि॥१॥

माता-पितु-आचरिय-ञाति-समूहा,
अवेरा होन्तु, अब्यापज्झा होन्तु।
अनीघा होन्तु, सुखी अत्तानं परिहरन्तु॥२॥

आरक्खदेवता भूम्मट्ठदेवता रुक्खट्ठदेवता
आकासट्ठदेवता, अवेरा होन्तु, अब्यापज्झा होन्तु।
अनीघा होन्तु, सुखी अत्तानं परिहरन्तु॥३॥

पुरत्थिमाय दिसाय, पच्छिमाय दिसाय,
उत्तराय दिसाय, दक्खिणाय दिसाय,
हेट्ठिमाय दिसाय, उपरिमाय दिसाय,
पुरत्थिमाय अनुदिसाय, पच्छिमाय अनुदिसाय,
उत्तराय अनुदिसाय, दक्खिणाय अनुदिसाय,
सब्बे सत्ता, सब्बे पाणा, सब्बे भूता, सब्बे पुग्गला,
सब्बे अत्तभावपरियापन्ना, सब्बा इत्थियो, सब्बे पुरिसा,
सब्बे अरिया, सब्बे अनरिया, सब्बे देवा, सब्बे मनुस्सा,
सब्बे अमनुस्सा, सब्बे विनिपातिका,
अवेरा होन्तु, अब्यापज्झा होन्तु।
अनीघा होन्तु, सुखी अत्तानं परिहरन्तु॥४॥

१७. मैत्री-भावना

मैं वैर-विहीन होऊं, व्यापाद (द्वेष)-विहीन होऊं,
क्रोध-विहीन होऊं, सुखपूर्वक अपना संरक्षण करूं॥१॥

मेरे माता-पिता, आचार्य और ज्ञाति (जाति)-बंधु वैर-विहीन हों, व्यापाद (द्वेष)-विहीन हों, क्रोध-विहीन हों, सुख-पूर्वक अपना संरक्षण करें॥२॥

रक्षा करने वाले देव, भू-देव, वृक्षवासी देव, आकाशवासी देव वैर-विहीन हों, व्यापाद (द्वेष)-विहीन हों, क्रोध-विहीनहों, सुखपूर्वक अपना संरक्षण करें॥३॥

पूर्व दिशा, पश्चिम दिशा,
उत्तर दिशा, दक्षिण दिशा,
नीचे की दिशा, ऊपर की दिशा,
पूर्व-दक्षिण दिशा, पश्चिम-दक्षिण दिशा,
पूर्व-उत्तर दिशा, पश्चिम-उत्तर दिशा अर्थात
(दशों दिशाओं) के सभी सत्व, सभी प्राणी,
सभी जीव, सभी पुद्गल, जन्म ग्रहण किए सभी व्यक्ति,
सभी स्त्रियां, सभी पुरुष, सभी आर्य, सभी अनार्य,
सभी देव, सभी मनुष्य, सभी अमनुष्य,
और सभी नरकगामी – वैर-विहीन हों,
ब्यापाद (द्वेष)-विहीन हों, क्रोध-विहीन हों,
सुखपूर्वक अपना संरक्षण करें॥४॥

उद्धं याव भवग्गा च,
अधो याव अवीचितो।
समन्ता चक्क वाळेसु,
ये सत्ता पठवीचरा।
अब्यापज्झा अवेरा च,
निद्दुक्खा चानुपद्दवा॥५॥

उद्धं याव भवग्गा च,
अधो याव अवीचितो।
समन्ता चक्क वाळेसु,
ये सत्ता उदके चरा।
अब्यापज्झा अवेरा च,
निद्दुक्खा चानुपद्दवा॥६॥

उद्धं याव भवग्गा च,
अधो याव अवीचितो।
समन्ता चक्क वाळेसु,
ये सत्ता आकासेचरा।
अब्यापज्झा अवेरा च,
निद्दुक्खा चानुपद्दवा॥७॥

ऊपर भवाग्र से लेकर
नीचे अवीचि नरक तक
सभी चक्रवालों के
थलवासी प्राणी
द्वेष-विहीन हों, वैर-विहीन हों,
दुःख-विहीन हों, उपद्रव-विहीन हों॥५॥

ऊपर भवाग्र से लेकर
नीचे अवीचि नरक तक
सभी चक्रवालों के
जलवासी प्राणी
द्वेष-विहीन हों, वैर-विहीन हों,
दुःख-विहीन हों, उपद्रव-विहीन हों॥६॥

ऊपर भवाग्र से लेकर
नीचे अवीचि नरक तक
सभी चक्रवालों के
नभवासी प्राणी
द्वेष-विहीन हों, वैर-विहीन हों,
दुःख-विहीन हों, उपद्रव-विहीन हों॥७॥

१८. मेत्तानिसंससुत्त

पूरेन्तो बोधिसम्भारे, नाथो तेमिय जातियं।
मेत्तानिसंसं यं आह, सुनन्दं नाम सारथिं।
सब्बलोक हितत्थाय, परित्तं तं भणामहे॥

पहूतभक्खो भवति, विप्पवुत्थो सका घरा।
बहूनं उपजीवन्ति, यो मित्तानं न दुब्भति॥१॥

यं यं जनपदं याति, निगमे राजधानियो।
सब्बत्थ पूजितो होति, यो मित्तानं न दुब्भति॥२॥

नास्स चोरा पसहन्ति, नातिमञ्ञेति खत्तियो।
सब्बे अमित्ते तरति, यो मित्तानं न दुब्भति॥३॥

अकुद्धो सघरं एति, सभायं पटिनन्दितो।
ञातीनं उत्तमो होति, यो मित्तानं न दुब्भति॥४॥

सक्कत्वा सक्कतो होति, गरू होति सगारवो।
वण्णकित्तिभतो होति, यो मित्तानं न दुब्भति॥५॥

१८. मैत्री-महिमा-सुत्त

बोधि के लिए पारमिताओं को पूर्ण करते हुए (बोधिसत्त्व) नाथ ने तेमिय के रूप में जन्म ले कर सुनन्द नामक सारथी को मैत्री की महानता का आख्यान किया, उस परित्राण को सारे लोक के हित के लिए कह रहे हैं –

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; वह अपने घर से बाहर (प्रवास में जाने पर) खाद्य-भोग का भागी होता है, उसके सहारे अनेकों की जीविका चलती है॥१॥

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; वह जिस-जिस जनपद कस्बे और राजधानी में जाता है, सर्वत्र पूजित होता है॥२॥

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; उसे चोर परेशान नहीं करते, राजा उसका अनादर नहीं करता, वह सभी शत्रुओं पर विजय पा लेता है॥३॥

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; वह प्रसन्नचित्त से अपने घर लौटता है, सभा में उसका स्वागत होता है, जाति-बिरादरी में वह उत्तम माना जाता है॥४॥

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; वह सत्कार करके सत्कार पाता है, गौरव करके गौरवशाली होता है, वह प्रशंसा और कीर्ति का भोगी होता है॥५॥

पूजको लभते पूजं, वन्दको पटिवन्दनं।
यसो कित्तिञ्च पप्पोति, यो मित्तानं न दुब्भति॥६॥

अग्गि यथा पज्जलति, देवताव विरोचति।
सिरिया अजहितो होति, यो मित्तानं न दुब्भति॥७॥

गावो तस्स पजायन्ति, खेत्ते वुत्तं विरूहति।
वुत्तानं फलमस्नाति, यो मित्तानं न दुब्भति॥८॥

दरितो पब्बततो वा, रुक्खतो पतितो नरो।
चुतो पतिट्ठं लभति, यो मित्तानं न दुब्भति॥९॥

विरूळ्हमूलसन्तानं, निग्रोधमिव मालुतो।
अमित्ता नप्पसहन्ति, यो मित्तानं न दुब्भति॥१०॥

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; उस पूजा करने वाले की पूजा होती है, वंदना करने वाले की वंदना होती है, वह यश और कीर्ति को प्राप्त होता है॥६॥

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; वह आग के समान प्रज्वलित होता है, देवता के समान प्रकाशमान होता है, श्री-युक्त होता है॥७॥

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; उसकी गायें प्रजनन करती हैं, खेत में बोया बढ़ता है और जो बोता है उसका वह फल खाता है॥८॥

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; दर्रे, पर्वत अथवा वृक्ष से गिरा हुआ वह व्यक्ति, गिर कर भी सहारा पा लेता है॥९॥

जो मित्रों को धोखा नहीं देता; उसे शत्रु पराजित नहीं कर सकते, वैसे ही जैसे कि मजबूत जड़ वाले बड़े बरगद के वृक्ष का हवा (आंधी) कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती॥१०॥

१९. पराभवसुत्त

एवं मे सुतं –

एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिक स्स आरामे। अथ खो अञ्ञतरा देवता अभिक्क न्ताय रत्तिया अभिक्क न्तवण्णा के वलक प्पं जेतवनं ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एक मन्तं अट्ठासि। एक मन्तं ठिता खो सा भगवन्तं गाथाय अज्झभासि –

पराभवन्तं पुरिसं, मयं पुच्छाम गोतमं।
भगवन्तं पुट्ठुमागम्म, किं पराभवतो मुखं॥१॥

सुविजानो भवं होति, सुविजानो पराभवो।
धम्मक ामो भवं होति, धम्मदेस्सी पराभवो॥२॥

इति हेतं विजानाम, पठमो सो पराभवो।
दुतियं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥३॥

असन्तस्स पिया होन्ति, सन्ते न कु रुते पियं।
असतं धम्मं रोचेति, तं पराभवतो मुखं॥४॥

इति हेतं विजानाम, दुतियो सो पराभवो।
ततियं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥५॥

निद्दासीली सभासीली, अनुट्ठाता च यो नरो।
अलसो क ोधपञ्ञाणो, तं पराभवतो मुखं॥६॥

१९. पराभव(अवनति)-सुत्त

ऐसा मैंने सुना –

एक समय भगवान श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक के जेतवन आराम में विहार कर रहे थे। उस समय एक देवता रात्रि बीतने पर अपनी उज्ज्वल कांति से सारे जेतवन को प्रकाशित कर जहां भगवान थे वहां गया, और भगवान के समीप जाकर उन्हें अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़े होकर उस देवता ने भगवान से गाथा में यह प्रश्न पूछा –

हम आप गौतम से अवनति की ओर जानेवाले पुरुष के विषय में पूछने आये हैं। भगवन! बतायें कि अवनति का क्या कारण है?॥१॥

(इस प्रकार उस देवता की प्रार्थना पर भगवान ने भी गाथा में उत्तर दिया) –

उन्नतिशील व्यक्ति की पहचान सरल है। अवनतिगामी की भी पहचान सरल है। धर्म-प्रेमी की उन्नति होती है और धर्म-द्वेषी की अवनति॥२॥

देवता –अवनति के इस पहले कारण को तो हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का दूसरा कारण बतायें॥३॥

भगवान –जब उसको असंतजन प्रिय लगते हैं और संत अप्रिय; जब उसे असन्तों के आचरण रुचिकर प्रतीत होते हैं, तो वह उसकी अवनति का कारण है॥४॥

देवता –अवनति के इस दूसरे कारण को भी हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का तीसरा कारण बतायें॥५॥

भगवान –जो व्यक्ति निद्रालु, सभा में जुटा रहने वाला, अनुद्योगी, आलसी और क्रोधी होता है, तो वह उसकी अवनति का कारण होता है॥६॥

इति हेतं विजानाम, ततियो सो पराभवो।
चतुत्थं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥७॥

यो मातरं वा पितरं वा, जिण्णकं गतयोब्बनं।
पहु सन्तो न भरति, तं पराभवतो मुखं॥८॥

इति हेतं विजानाम, चतुत्थो सो पराभवो।
पञ्चमं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥९॥

यो ब्राह्मणं वा समणं वा, अञ्ञं वा'पि वनिब्बकं।
मुसावादेन वञ्चेति, तं पराभवतो मुखं॥१०॥

इति हेतं विजानाम, पञ्चमो सो पराभवो।
छट्ठमं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥११॥

पहूतवित्तो पुरिसो, सहिरञ्ञो सभोजनो।
एको भुञ्जति सादूनि, तं पराभवतो मुखं॥१२॥

इति हेतं विजानाम, छट्ठमो सो पराभवो।
सत्तमं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥१३॥

जातित्थद्धो धनत्थद्धो, गोत्तत्थद्धो च यो नरो।
सञ्ञातिं अतिमञ्ञेति, तं पराभवतो मुखं॥१४॥

इति हेतं विजानाम, सत्तमो सो पराभवो।
अट्ठमं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥१५॥

इत्थिधुत्तो सुराधुत्तो, अक्खधुत्तो च यो नरो।
लद्धं लद्धं विनासेति, तं पराभवतो मुखं॥१६॥

देवता – अवनति के इस तीसरे कारण को हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का चौथा कारण बतायें॥७॥

भगवान – जो व्यक्ति समर्थ होते हुए भी अपने वृद्ध एवं जीर्ण माता या पिता का भरण-पोषण नहीं करता है, तो वह उसकी अवनति का कारण होता है॥८॥

देवता – अवनति के इस चौथे कारण को भी हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का पांचवा कारण बतायें॥९॥

भगवान – जब कोई मनुष्य किसी श्रमण, ब्राह्मण अथवा अन्य याचक को कुछ न देने की मंशा से झूठ बोलकर धोखा देता है, तो वह उसकी अवनति का कारण है॥१०॥

देवता – अवनति के इस पांचवे कारण को भी हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का छठा कारण बतायें॥११॥

भगवान – किसी के पास प्रचुर मात्रा में धन-संपत्ति हो, हिरण्य-सुवर्ण हो, भोजन-सामग्रियां हों, तब भी अकेला सुस्वादु पदार्थों का उपभोग करता हो, तो वह उसकी अवनति का कारण है॥१२॥

देवता – अवनति के इस छठे कारण को भी हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का सातवां कारण बतायें॥१३॥

भगवान – जो व्यक्ति अपनी जाति, धन-संपदा और गोत्र का अभिमान करता है और इस प्रकार अभिमानवश अपने बंधुओं का निरादर करता है, तो वह उसकी अवनति का कारण है॥१४॥

देवता – अवनति के इस सातवें कारण को भी हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का आठवां कारण बतायें॥१५॥

भगवान – जो व्यक्ति स्त्रियों में, शराब और जुए में रत रहता हो, सारे कमाये धन को नष्ट करता हो, तो वह उसकी अवनति का कारण है॥१६॥

इति हेतं विजानाम, अट्ठमो सो पराभवो।
नवमं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥१७॥

सेहि दारेहि असन्तुट्ठो, वेसियासु पदिस्सति।
दिस्सति परदारेसु, तं पराभवतो मुखं॥१८॥

इति हेतं विजानाम, नवमो सो पराभवो।
दसमं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥१९॥

अतीतयोब्बनो पोसो, आनेति तिम्बरुत्थनिं।
तस्सा इस्सा न सुपति, तं पराभवतो मुखं॥२०॥

इति हेतं विजानाम, दसमो सो पराभवो।
एकादसमं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥२१॥

इत्थिसोण्डिं विकिरणिं, पुरिसं वा'पि तादिसं।
इस्सरियस्मिं ठपेति, तं पराभवतो मुखं॥२२॥

इति हेतं विजानाम, एकादसमो सो पराभवो।
द्वादसमं भगवा ब्रूहि, किं पराभवतो मुखं॥२३॥

अप्पभोगो महातण्हो, खत्तिये जायते कुले।
सो च रज्जं पत्थयति, तं पराभवतो मुखं॥२४॥

एते पराभवे लोके, पण्डितो समवेक्खिय।
अरियो दस्सनसम्पन्नो, स लोकं भजते सिवं'ति॥२५॥

देवता –अवनति के इस आठवें कारणको भी हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का नवां कारण बतायें॥१७॥

भगवान –जो अपनी पत्नी से असंतुष्ट रहता हो, वेश्याओं और पराई स्त्रियों के साथ दिखाई देता हो, तो वह उसकी अवनति का कारण है॥१८॥

देवता –अवनति के इस नवें कारणको भी हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का दसवां कारण बतायें॥१९॥

भगवान –वृद्ध व्यक्ति जब नवयुवती को (ब्याह) लाये और उससे अविश्वास एवं ईर्ष्या के कारण वह सो न सके ,तो वह उसकी अवनति का कारण है॥२०॥

देवता –अवनति के इस दसवें कारणको भी हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का ग्यारहवां कारण बतायें॥२१॥

भगवान –जब किसी लालची या सम्पत्ति को नष्ट करनेवाली स्त्री या पुरुष को संपत्ति का मालिक बना दिया जाय, तो वह उसकी अवनति का कारण है॥२२॥

देवता –अवनति के इस ग्यारहवें कारणको भी हमने जान लिया। अब भगवन! अवनति का बारहवां कारण बतायें॥२३॥

भगवान –क्षत्रिय कुल में उत्पन्न अल्प संपत्ति वाला और महालालची पुरुष जब राज्य की कामना करता है, तो वह उसकी अवनति का कारण है॥२४॥

बुद्धिमान आर्य व्यक्ति संसार में अवनति के इतने कारणों को जानकर दर्शन युक्त हो स्वर्ग लोक को प्राप्त होता है॥२५॥

२०. आटानाटियसुत्त

अप्पसन्नेहि नाथस्स, सासने साधु सम्मते।
अमनुस्सेहि चण्डेहि, सदा कि ब्बिसक ारिभि॥

परिसानं चतस्सन्नं, अहिंसाय च गुत्तिया।
यं देसेसि महावीरो, परित्तं तं भणामहे॥

विपस्सिस्स च नमत्थु, चक्खुमन्तस्स सिरीमतो।
सिखिस्सपि च नमत्थु, सब्ब भूतानुक म्पिनो॥१॥

वेस्सभुस्स च नमत्थु, न्हातक स्स तपस्सिनो।
नमत्थु क कु सन्धस्स, मारसेनप्पमद्दिनो॥२॥

क ोणागमनस्स नमत्थु, ब्राह्मणस्स वुसीमतो।
क स्सपस्स च नमत्थु, विप्पमुत्तस्स सब्बधि॥३॥

अङ्गीरसस्स नमत्थु, सक्यपुत्तस्स सिरीमतो।
यो इमं धम्मं देसेसि, सब्बदुक्खापनूदनं॥४॥

ये चापि निब्बुता लोके, यथाभूतं विपस्सिसुं।
ते जना अपि सुणाथ, महन्ता वीतसारदा॥५॥

हितं देव-मनुस्सानं, यं नमस्सन्ति गोतमं।
विज्जाचरण-सम्पन्नं, महन्तं वीतसारदं॥६॥

एते चञ्ञे च सम्बुद्धा, अनेक सत-क ोटियो।
सब्बे बुद्धा समसमा, सब्बे बुद्धा महिद्धिक ा॥७॥

२०. आटानाटिय-सुत्त

भगवान के साधु-सम्मत धर्म के प्रति अप्रसन्न रहने वाले, सद्भावना न रखने वाले, चंड स्वभाव वाले अमनुष्य (यक्ष, देव आदि) सर्वदा दुष्ट कर्मों में ही लीन रहते हैं।

चतुर्वर्गीय परिषद (भिक्षु, भिक्षुणी, उपासक ,उपासिका) को ऐसे दुष्ट कष्ट न दें और उनकी रक्षा हो सके, इस निमित्त महावीर भगवान बुद्ध ने इस (आटानाटिय-सुत्त) परित्राण की देशना की थी, उसे हम कहरहे हैं –

अंतर्चक्षु प्राप्त श्रीमान (भगवान) विपस्सी बुद्ध को नमस्कार है! सब प्राणियों पर अनुकम्पा करनेवाले (भगवान) सिखी बुद्ध को नमस्कार है!! १॥

समस्त क्लेशों को धो देने वाले तपस्वी (भगवान) वेस्सभु बुद्ध को नमस्कार है! मार सेना का मर्दन करनेवाले (भगवान) ककुसन्धबुद्ध को नमस्कार है!!२॥

पूर्णता प्राप्त ब्राह्मण (भगवान) कोणागमन को नमस्कार है! सभी क्लेशों से पूर्णतया विमुक्त (भगवान) कस्सपबुद्ध को नमस्कार है!!३॥

जिनके अंग-अंग से प्रकाश प्रस्फुटित होता है ऐसे अंगीरस श्रीमान शाक्यपुत्र (भगवान गौतम बुद्ध) को नमस्कार है, जिन्होंने सभी दुःखों के विनाश हेतु यह धर्म-देशना दी है॥४॥

विपश्यना भावना द्वारा धर्म का यथाभूत दर्शन कर जो अरहन्त जन इस लोक में ही निर्वाण प्राप्त कर चुके हैं, वे महान और बुद्धिमान जन भी सुनें॥५॥

जो विद्याचरणसंपन्न, महान और प्रज्ञावान, बुद्ध को देव-मनुष्यों के हित के लिए नमस्कार करते हैं, (वे भी सुनें)॥६।

उपरोक्त सम्यक संबुद्धों के अतिरिक्त जो अनेक शत-कोटि सम्यक संबुद्ध हुए हैं वे अन्य किसी की भी तुलना में अ-सम हैं, महान हैं; परंतु पारस्परिक तुलना में सभी सम हैं, सभी विपुल ऋद्धि-शाली हैं॥७॥

सब्बे दसबलूपेता, वेसारज्जेहुपागता।
सब्बे ते पटिजानन्ति, आसभट्ठानमुत्तमं॥८॥

सीहनादं नदन्तेते, परिसासु विसारदा।
ब्रह्मचक्कं पवत्तेन्ति, लोके अप्पटिवत्तियं॥९॥

उपेता बुद्ध-धम्मेहि, अट्ठारसहि नायका।
बत्तिंस - लक्खणूपेता, सीतानुब्यञ्जना धरा॥१०॥

ब्यामप्पभाय सुप्पभा, सब्बे ते मुनि - कुञ्जरा।
बुद्धा सब्बञ्ञुनो एते, सब्बे खीणासवा जिना॥११॥

महापभा महातेजा, महापञ्ञा महब्बला।
महाकारुणिका धीरा, सब्बेसानं सुखावहा॥१२॥

दीपा नाथा पतिट्ठा च, ताणा लेणा च पाणिनं।
गती बन्धू महेस्सासा, सरणा च हितेसिनो॥१३॥

सदेवकस्स लोकस्स, सब्बे एते परायणा।
तेसाहं सिरसा पादे, वन्दामि पुरिसुत्तमे॥१४॥

वचसा मनसा चेव, वन्दामेते तथागते।
सयने आसने ठाने, गमने चापि सब्बदा॥१५॥

सदा सुखेन रक्खन्तु, बुद्धा सन्तिकरा तुवं।
तेहि त्वं रक्खितो सन्तो, मुत्तो सब्बभयेहि च॥१६॥

सब्बरोगा विनीमुत्तो, सब्बसन्ताप-विज्जतो।
सब्बवेर-मतिक्कन्तो, निब्बुतो च तुवं भव॥१७॥

तेसं सच्चेन सीलेन, खन्ति मेत्ता बलेन च।
तेपि त्वं अनुरक्खन्तु, अरोगेन सुखेन च॥१८॥

सभी बुद्ध दस-बलशाली होते हैं, सभी वैशारद्यप्राप्त भयमुक्त होते हैं, वे सभी परमार्षभ याने परमोत्तम स्थान को प्राप्त स्वीकारकरते है॥८॥

ये सभी सिंहनाद सदृश देशना द्वारा संपूर्ण परिषद को निर्भय कर देते हैं और ऐसे ब्रह्मचक्र (धर्मचक्र) का प्रवर्तन करते हैं, जिसका कि समस्त लोक में कोई भी प्राणी उल्टा प्रवर्तन नहीं कर सकता॥९॥

ये सभी लोकनायक अट्ठारह बुद्ध-गुण-धर्मों से युक्त हैं, महापुरुषों के बत्तीस प्रमुख लक्षणों और अस्सी अनुव्यंजनों को धारण करनेवाले हैं॥१०॥

ये सभी मुनि श्रेष्ठ व्यामप्रभा से प्रभान्वित होते हैं। ये सभी बुद्ध सर्वज्ञ होते हैं और क्षीण-आस्रव (जन) होते हैं॥११॥

ये बुद्ध महाप्रभावान, महातेजस्वी, महाप्रज्ञावान, महाबलशाली, महाकारुणिक पंडित और सभी प्राणियों के लिए सुख लानेवाले हैं॥१२॥

ये सभी बुद्ध, डूबते हुये के लिए द्वीप, अनाथों के नाथ, निराधारों के आधार, त्राणरहितों के त्राण, निरालयों के आलय, अगतिवानों की गति, बंधुहीनों के बंधु, निराश लोगों की आशा, अशरणों की शरण और सब के हितैषी हैं॥१३॥

इस प्रकार देवताओं सहित समस्त लोकों के शरणदायक (आधार) परम पुरुषोत्तम बुद्धों के चरणों में नत-मस्तक होकर मैं वंदना करता हूं!!१४॥

सोते, बैठते, खड़े और चलते, सभी समय ऐसे तथागत बुद्धों की मैं मन और वचन से वंदना करता हूं!!१५॥

ये शांतिदायक तुम्हें सदा सुखी रखें, तुम्हारी सदैव रक्षा करें! (इस प्रकार) उनके द्वारा रक्षित होकर तुम सब प्रकार के भय से मुक्त हो जाओ!!१६॥

सब प्रकार के रोग, संताप और वैरों से विमुक्त होकर तुम परम सुख और शांति प्राप्त करो!!१७॥

वे बुद्ध अपने सत्य, शील, क्षांति (क्षमा) और मैत्री के बल से, तुम्हारी रक्षा करें! निरोग और सुखी रखें!!१८॥

पुरत्थिमस्मिं दिसाभागे, सन्ति भूता महिद्धिका।
तेपि त्वं अनुरक्खन्तु, अरोगेन सुखेन च॥१९॥

दक्खिणस्मिं दिसाभागे, सन्ति देवा महिद्धिका।
तेपि त्वं अनुरक्खन्तु, अरोगेन सुखेन च॥२०॥

पच्छिमस्मिं दिसाभागे, सन्ति नागा महिद्धिका।
तेपि त्वं अनुरक्खन्तु, अरोगेन सुखेन च॥२१॥

उत्तरस्मिं दिसाभागे, सन्ति यक्खा महिद्धिका।
तेपि त्वं अनुरक्खन्तु, अरोगेन सुखेन च॥२२॥

पुरत्थिमेन धतरट्ठो, दक्खिणेन विरूळ्हको।
पच्छिमेन विरूपक्खो, कुवेरो उत्तरं दिसं॥२३॥

चत्तारो ते महाराजा, लोकपाला यसस्सिनो।
तेपि त्वं अनुरक्खन्तु, अरोगेन सुखेन च॥२४॥

आकासट्ठा च भूमट्ठा, देवा नागा महिद्धिका।
तेपि त्वं अनुरक्खन्तु, अरोगेन सुखेन च॥२५॥

इद्धिमन्तो च ये देवा, वसन्ता इध सासने।
तेपि त्वं अनुरक्खन्तु, अरोगेन सुखेन च॥२६॥

सब्बीतियो विवज्जन्तु, सोको रोगो विनस्सतु।
मा ते भवन्त्वन्तरायो, सुखी दीघायुको भव॥२७॥

अभिवादन-सीलस्स, निच्चं वुद्धापचायिनो।
चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति, आयु वण्णो सुखं बलं॥२८॥

पूर्व दिशावासी महान ऋद्धिशाली (गंधर्व) प्राणी हैं, वे तुम्हारी रक्षा करें! निरोग और सुखी रखें!!१९॥

दक्षिण दिशावासी महान ऋद्धिशाली (कुम्भण्ड) देव हैं, वे तुम्हारी रक्षा करें! निरोग और सुखी रखें!!२०॥

पश्चिम दिशावासी महान ऋद्धिशाली (नाग) देव हैं, वे तुम्हारी रक्षा करें! निरोग और सुखी रखें!!२१॥

उत्तर दिशावासी महान ऋद्धिशाली (यक्ष) देव हैं, वे तुम्हारी रक्षा करें!निरोग और सुखी रखें!!२२॥

पूर्व दिशा में धृतराष्ट्र हैं, दक्षिण दिशा में विरूढ़क हैं, पश्चिम दिशा में विरूपाक्ष हैं, उत्तर दिशा में कुबेरहैं॥२३॥

ये चातुर्महाराजिक यशस्वी लोकपाल देवता हैं, वे तुम्हारी रक्षा करें!निरोग और सुखी रखें!!२४॥

धरती और आकाशपर रहने वाले सभी महान ऋद्धिशालीदेव और नाग हैं, वे तुम्हारी रक्षा करें!निरोग और सुखी रखें!!२५॥

वर्तमान (बुद्ध) शासन में रहने वाले जो सभी ऋद्धिमानदेव हैं वे भी तुम्हारी रक्षा करें!निरोग और सुखी रखें!!२६॥

तुम्हारे सब उपद्रव दूर हों! शोक और रोग विनष्ट हों! कोई अंतराय (विघ्न) न रहे! तुम सुखी रहो! दीर्घायु होओ!!२७॥

जो अभिवादनशील है, सदा वृद्धों की सेवा करने वाला है, उसके चारों धर्म (संपदाएं) – आयु, वर्ण, सुख और बल बढ़ते हैं॥२८॥

२१. बोज्झङ्गसुत्त

संसारे संसरन्तानं, सब्बदुक्खविनासके ।
सत्तधम्मे च बोज्झङ्गे, मारसेनपमद्दने ॥

बुज्झित्वा येचिमे सत्ता, तिभवा मुत्तकु त्तमा ।
अजातिमजरा ब्याधिं, अमतं निब्भयं गता ॥

एवमादि गुणूपेतं, अनेक गुणसङ्गहं ।
ओसधञ्च इमं मन्तं, बोज्झङ्गञ्च भणामहे ॥

बोज्झङ्गो सतिसङ्खातो,
धम्मानं-विचयो तथा ।
वीरियं पीति पस्सद्धि,
बोज्झङ्गा च तथा परे ॥१ ॥

समाधुपेक्खा बोज्झङ्गा,
सत्तेते सब्बदस्सिना ।
मुनिना सम्मदक्खाता,
भाविता बहुलीक ता ॥२ ॥

संवत्तन्ति अभिञ्ञाय,
निब्बाणाय च बोधिया ।
एतेन सच्चवज्जेन,
सोत्थि ते होतु सब्बदा ॥३ ॥

२१. बोध्यंग-सुत्त

(भव) संसार में संसरण करनेवाले प्राणियों के सब दुःखों का विनाश करनेवाले और मार की सेना का मर्दन करनेवाले, इन सात बोध्यंगों को जिन श्रेष्ठ प्राणियों ने (स्वयं अनुभव से) जान कर, इसी बीच तीनों लोकों से मुक्त हो, जन्म बुढ़ापा और रोग से रहित हो निर्भय अमृत (निर्वाण) की प्राप्ति कर ली है।

ऐसे गुणों से युक्त अनेक गुणों के संग्रह-स्वरूप औषधि सदृश इस बोध्यंग सुत्त मंत्र को कह रहे हैं –

बोधि का अंग कहलाने वाले ये सात बोध्यंग हैं –
स्मृति, धर्म-विचय, वीर्य, प्रीति, प्रश्रब्धि, समाधि और उपेक्षा;
जिन्हें सर्वदर्शी मुनि (भगवान बुद्ध) ने स्वयं भावित तथा बहुलीकृत किया और भली प्रकार बतलाया॥१-२॥

वे अभिज्ञा, निर्वाण और बोधि को प्राप्त कराने वाले हैं। इस सत्य-वचन से सदा तेरा कल्याण हो॥३॥

एक स्मिं समये नाथो,
मोग्गलानञ्च क स्सपं।
गिलाने दुक्खिते दिस्वा,
बोज्झङ्गे सत्त देसयी॥४॥

ते च तं अभिनन्दित्वा,
रोगा मुच्चिंसु तङ्खणे।
एतेन सच्चवज्जेन,
सोत्थि ते होतु सब्बदा॥५॥

एक दा धम्मराजापि,
गेलञ्ञेनाभिपीलितो।
चुन्दत्थेरेन तं येव,
भणापेत्वान सादरं॥६॥

सम्मोदित्वान आबाधा,
तम्हा वुट्ठासि ठानसो।
एतेन सच्चवज्जेन,
सोत्थि ते होतु सब्बदा॥७॥

पहीना ते च आबाधा,
तिण्णन्नम्पि महेसिनं।
मग्गाहता कि लेसा'व,
पत्तानुपत्तिधम्मतं।
एतेन सच्चवज्जेन,
सोत्थि ते होतु सब्बदा॥८॥

भगवान बुद्ध ने एक समय मौद्गल्यायन और काश्यप को रोगी और दुःखी देखकर सात बोध्यंगों का उपदेश दिया था॥४॥

वे उनका अभिनंदन कर उसी क्षण रोग से मुक्त हो गये। इस सत्य वचन से सदा तेरा कल्याण हो!!५॥

एक समय धर्मराजा (बुद्ध) भी रोग से पीड़ित हो, चुन्द स्थविर से उसे ही आदरपूर्वक कहला कर;

आनंदित होकर उस रोग से एकदम उठ खड़े हुए थे। इस सत्य वचन से सदा तेरा कल्याण हो!!६-७॥

तीनों महर्षियों के वे रोग दूर हो गये, लोकोत्तर मार्ग पर चलने से उनके क्लेश समाप्त हुये और उन क्लेशों ने पुनः न उत्पन्न होने की धर्मता पायी। इस सत्यवचन से तेरा सदा कल्याण हो॥८॥

२२. नरसीह-गाथा

चक्क वरङ्कितरत्त-सुपादो,
लक्खणमण्डितआयतपण्ही।
चामरछत्तविभूसितपादो,
एसहि तुय्ह पिता नरसीहो॥१॥

साक्यकु मारवरो सुखुमालो,
लक्खणचित्तितपुण्णसरीरो।
लोक हिताय गतो नरवीरो,
एसहि तुय्ह पिता नरसीहो॥२॥

पुण्णससङ्कनिभो मुखवण्णो,
देवनरान पियो नरनागो।
मत्तगजिन्दविलासितगामी,
एसहि तुय्ह पिता नरसीहो॥३॥

खत्तियसम्भवअग्गकु लीनो,
देवमनुस्सनमस्सितपादो।
सीलसमाधिपतिट्ठितचित्तो,
एसहि तुय्ह पिता नरसीहो॥४॥

२२. नरसिंह-गाथा

[जब अपने पिता राजा शुद्धोधन के आग्रह पर भगवान बुद्ध कपिलवस्तु पधारे थे, उस समय राहुल-माता ने राहुल को इन्हीं शब्दों में तथागत का परिचय दिया था –]

जिनके रक्तवर्ण चरण चक्र से अलंकृत हैं, जिनकी लंबी एड़ी शुभ लक्षण वाली है, जिनके चरण पर चंवर तथा छत्र अंकित हैं, जो नरों में सिंह हैं, यही तेरे पिता हैं॥१॥

जो कुमार श्रेष्ठ शाक्य सुकुमार हैं, जिनका संपूर्ण शरीर सुंदर लक्षणों से चित्रित है, नरों में वीर, जिन्होंने लोक-हित के लिए गृह-त्याग किया है; जो नरों में सिंह हैं, यही तेरे पिता हैं॥२॥

जिनका मुख पूर्ण चंद्र के समान प्रकाशित है, जो नरों में हाथी के समान हैं तथा सभी देवाताओं और नरों के प्रिय हैं, जिनकी चाल मस्त गजेंद्र की सी हैं; जो नरों में सिंह हैं, यही तेरे पिता हैं॥३॥

जो अग्र क्षत्रिय कुलोत्पन्न हैं, जिनके चरणों की सभी देव और मनुष्य वंदना करते हैं, जिनका चित्त शील-समाधि में सुप्रतिष्ठित है; जो नरों में सिंह हैं, यही तेरे पिता हैं॥४॥

आयतयुत्तसुसण्ठितनासो,
गोपखुमो अभिनीलसुनेत्तो।
इन्दधनुअभिनीलभमूको,
एसहि तुय्ह पिता नरसीहो॥५॥

वट्टसुवट्ट-सुसण्ठित-गीवो,
सीहहनु मिगराजसरीरो।
कञ्चनसुच्छवि उत्तमवण्णो,
एसहि तुय्ह पिता नरसीहो॥६॥

सिनिद्धसुगम्भीरमञ्जुसुघोसो,
हिङ्गुलबद्ध-सुरत्तसुजिव्हो।
वीसति वीसति सेतसुदन्तो,
एसहि तुय्ह पिता नरसीहो॥७॥

अञ्जनवण्णसुनीलसुके सो,
कञ्चनपट्टविसुद्धललाटो।
ओसधिपण्डरसुद्धसुवण्णो,
एसहि तुय्ह पिता नरसीहो॥८॥

गच्छति नीलपथे विय चन्दो,
तारागणपरिवेट्ठितरूपो।
सावक मज्झ गतो समणिन्दो,
एसहि तुय्ह पिता नरसीहो॥९॥

जिनकी नासिका चौड़ी तथा सुडौल है, बछिया की सी जिनकी बरौनियाँ हैं, जिनके नेत्र सुनील वर्ण हैं, जिनकी भौंहें इन्द्र धनुष के समान हैं, जो नरों में सिंह हैं, यही तेरे पिता हैं॥५॥

जिनकी ग्रीवा गोलाकार है, सुगठित है, जिनकी ठोड़ी सिंह के समान है तथा जिनका शरीर मृगराज के समान है, जिनका वर्ण सुवर्ण के समान उत्तम है; जो नरों में सिंह हैं, यही तेरे पिता हैं॥६॥

जिनकी वाणी स्निग्ध, गंभीर, सुंदर है; जिनकी जिह्वा सिंदूर के समान रक्त-वर्ण है, जिनके मुँह में श्वेत वर्ण के बीस-बीस दांत हैं; जो नरों में सिंह हैं, यही तेरे पिता हैं॥७॥

जिनके केश सुरमे के समान नीलवर्ण हैं, जिनका ललाट स्वर्ण के समान विशुद्ध है, जिनका शरीर चमकते हुए औषधि तारे के समान शुभ्र वर्ण है, जो नरों में सिंह हैं, यही तेरे पिता हैं॥८॥

जो आकाश में चन्द्रमा की भांति बढ़े जा रहे हैं, जो (श्रमणेन्द्र) अपने श्रावकों से उसी प्रकार घिरे हुए हैं जैसे चंद्रमा तारों से, जो नरों में सिंह हैं, यही तेरे पिता हैं॥९॥

२३. पुब्बण्हसुत्त

यं दुन्निमित्तं अवमङ्गलञ्च, यो चामनापो सकु णस्स सद्दो।
पापग्गहो दुस्सुपिनं अक न्तं, बुद्धानुभावेन विनासमेन्तु ॥१॥

यं दुन्निमित्तं अवमङ्गलञ्च, यो चामनापो सकु णस्स सद्दो।
पापग्गहो दुस्सुपिनं अक न्तं, धम्मानुभावेन विनासमेन्तु ॥२॥

यं दुन्निमित्तं अवमङ्गलञ्च, यो चामनापो सकु णस्स सद्दो।
पापग्गहो दुस्सुपिनं अक न्तं, सङ्घानुभावेन विनासमेन्तु ॥३॥

दुक्खप्पत्ता च निद्दुक्खा, भयप्पत्ता च निब्भया।
सोक प्पत्ता च निस्सोका, होन्तु सब्बेपि पाणिनो ॥४॥

एत्तावता च अम्हेहि, सम्भतं पुञ्ञसम्पदं।
सब्बे देवानुमोदन्तु, सब्बसम्पत्ति सिद्धिया ॥५॥

दानं ददन्तु सद्धाय, सीलं रक्खन्तु सब्बदा।
भावनाभिरता होन्तु, गच्छन्तु देवतागता ॥६॥

सब्बे बुद्धा बलप्पत्ता, पच्चेक ानञ्च यं बलं।
अरहन्तानञ्च तेजेन, रक्खं बन्धामि सब्बसो ॥७॥

यं कि ञ्चि वित्तं इध वा हुरं वा, सग्गेसु वा यं रतनं पणीतं।
न नो समं अत्थि तथागतेन, इदम्पि बुद्धे रतनं पणीतं।
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु ॥८॥

२३. पूर्वाह्न-सुत्त

ये जो अमंगल चिह्न हैं, पक्षियों के अप्रिय शब्द हैं, पाप-ग्रह हैं, अप्रिय दुःस्वप्न हैं –ये सारे अशुभ निमित्त (भगवान) बुद्ध के प्रताप से विनष्ट हों!!१॥

ये जो अमंगल चिह्न हैं, पक्षियों के अप्रिय शब्द हैं, पाप-ग्रह हैं, अप्रिय दुःस्वप्न हैं –ये सारे अशुभ निमित्त धर्म के प्रताप से विनष्ट हों!!२॥

ये जो अमंगल चिह्न हैं, पक्षियों के अप्रिय शब्द हैं, पाप-ग्रह हैं, अप्रिय दुःस्वप्न हैं –ये सारे अशुभ निमित्त संघ के प्रताप से विनष्ट हों!!३॥

सभी दुःख-ग्रस्त प्राणी दुःख-मुक्त हों, भय-ग्रस्त भय-मुक्त हों, शोक-ग्रस्त शोक-मुक्तहों॥४॥

यह जो हमने इतनी पुण्य संपदा अर्जित की है, इसके पुण्य-दान का सभी देवगण पुण्यानुमोदन करें, जिससे कि हमें सब प्रकार की सुख-सम्पत्ति की प्राप्ति हो!!५॥

श्रद्धापूर्वक दान दें, सर्वदा शील का पालन करें, (शमथ और विपश्यना) भावना में रत रहें और देवगति प्राप्त करें!!६॥

सभी बलप्राप्त सम्यक सम्बुद्धों के और प्रत्येक बुद्धों के बल से एवं अरहन्तों के तेज से मैं सब तरह से रक्षा (सूत्र) बांधता हूं॥७॥

इस लोक में अथवा अन्य लोकोंमें जो भी धन-सम्पत्ति है और स्वर्गों में जो भी अमूल्य रत्न हैं, उनमें से कोईभी तथागत के समान श्रेष्ठ नहीं है। सचमुच बुद्ध में यही श्रेष्ठ रत्न है! इस सत्य से कल्याणहो!!८॥

यं किञ्चि वित्तं इध वा हुरं वा, सग्गेसु वा यं रतनं पणीतं।
न नो समं, अत्थि तथागतेन, इदम्पि धम्मे रतनं पणीतं।
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥९॥

यं किञ्चि वित्तं, इध वा हुरं वा, सग्गेसु वा यं रतनं पणीतं।
न नो समं, अत्थि तथागतेन, इदम्पि सङ्घे रतनं पणीतं।
एतेन सच्चेन सुवत्थि होतु॥१०॥

भवतु सब्बमङ्गलं, रक्खन्तु सब्बदेवता।
सब्बबुद्धानुभावेन, सदा सुखी भवन्तु ते॥११॥

भवतु सब्बमङ्गलं, रक्खन्तु सब्बदेवता।
सब्बधम्मानुभावेन, सदा सुखी भवन्तु ते॥१२॥

भवतु सब्बमङ्गलं, रक्खन्तु सब्बदेवता।
सब्बसङ्घानुभावेन, सदा सुखी भवन्तु ते॥१३॥

महाकारुणिकोनाथो, हिताय सब्ब पाणिनं।
पूरेत्वा पारमी सब्बा, पत्तो सम्बोधिमुत्तमं।
एतेन सच्चवज्जेन, सोत्थि ते होतु सब्बदा॥१४॥

जयन्तो बोधिया मूले, सक्यानं नन्दिवड्ढनो।
एवमेव जयो होतु, जयस्सु जय मङ्गलं॥१५॥

अपराजितपल्लङ्के, सीसे पुथुविपुक्खले।
अभिसेके सब्बबुद्धानं, अग्गप्पत्तो पमोदति॥१६॥

इस लोक में अथवा अन्य लोकोंमें जो भी धन-सम्पत्ति है और स्वर्गों में जो भी अमूल्य रत्न हैं, उनमें से कोईभी तथागत के समान श्रेष्ठ नहीं है। सचमुच धर्म में यही श्रेष्ठ रत्न है! इस सत्य से कल्याणहो!!९॥

इस लोक में अथवा अन्य लोकोंमें जो भी धन-सम्पत्ति है और स्वर्गों में जो भी अमूल्य रत्न हैं, उनमें से कोईभी तथागत के समान श्रेष्ठ नहीं है। सचमुच सङ्घ में यही श्रेष्ठ रत्न है! इस सत्य से कल्याणहो!!१०॥

सब प्रकार से तुम्हारा मंगल हो! सभी देवता तुम्हारी रक्षा करें! सभी बुद्धों के प्रताप से तुम सदैव सुखी रहो!! ११॥

सब प्रकारसे तुम्हारा मंगल हो! सभी देवता तुम्हारी रक्षा करें!सभी धर्मों के प्रताप से तुम सदैव सुखी रहो!!१२॥

सब प्रकार से तुम्हारा मंगल हो! सभी देवता तुम्हारी रक्षा करें! सभी सङ्घों के प्रताप से तुम सदैव सुखी रहो!!१३॥

महाकारुणिक भगवान ने सब प्राणियों के हित-सुख के लिए समस्त पारमिताओं कोपरिपूर्ण कर उत्तम सम्बोधि प्राप्त की।इस सत्य वचन से तुम्हारा सदा कल्याणहो!!१४॥

शाक्यों के आनंदवर्धक भगवान गौतम ने बोधि-वृक्ष के तले जिस प्रकारदुष्ट मार पर विजय प्राप्त की,उसी प्रकारतुम्हारी भी जय हो, निश्चित रूप से तुम जय-मंगल लाभी बनो!!१५॥

समस्त बुद्धों के बुद्धाभिषेक हेतु विपुल शोभनीय अपराजित बोधि-पल्लंक (बुद्ध-आसन) पर सम्यक सम्बोधि प्राप्त करतेहुए जैसे सभी भगवान प्रमुदित हुए वैसे ही तुम भी अपनी मनोकामनाएंपूर्ण करप्रसन्नता प्राप्त करो!!१६॥

सुनक्खत्तं सुमङ्गलं, सुप्पभातं सुहुट्ठितं।
सुखणो सुमुहुत्तो च, सुयिट्ठं ब्रह्मचारिसु॥१७॥

पदक्खिणं कायकम्मं, वाचाकम्मं पदक्खिणं।
पदक्खिणं मनोकम्मं, पणीधि ते पदक्खिणं॥१८॥

पदक्खिणानि कत्वान, लभन्तेत्थे पदक्खिणे।
ते अत्थलद्धा सुखिता, विरूळ्हा बुद्धसासने।
अरोगा सुखिता होथ, सह सब्बेहि ञातिभि॥१९॥

तुम्हारे लिए नक्षत्र शुभ हो, घड़ी सुमंगल हो, प्रभात शुभ हो, सम्यक जागरण शुभ हो, क्षण शुभ हो, मुहूर्त शुभ हो और ब्रह्मचारियों के प्रति दी गयी आहुति शुभ हो!!१७॥

तुम्हारे कायिक-कर्म शुभ हों, वाचिक-कर्म शुभ हों, मानसिक-कर्म शुभ हों, तुम्हारी आकांक्षाएं शुभ हों!!१८॥

शुभ कर्म करो, यहाँ कल्याण प्राप्त करो। वे लक्ष्य (निर्वाण) प्राप्त कर सुखी होते थे और बुद्धशासन में प्रगति करते थे। तुम भी सभी बंधु-बांधवों सहित आरोग्य और सुख प्राप्त करो॥१९॥

२४. मङ्गल-कामना

सासनस्स च लोकस्स,
वुड्ढि भवतु सब्बदा।
सासनम्पि च लोकं च,
देवा रक्खन्तु सब्बदा॥१॥

सद्धिं होन्तु सुखी सब्बे,
परिवारेहि अत्तनो।
अनीघा सुमना होन्तु,
सह सब्बेहि ञातिभि॥२॥

राजतो वा चोरतो वा, मनुस्सतो वा अमनुस्सतो वा, अग्गितो वा उदकतो वा, पिसाचतो वा खाणुकतो वा, कण्टकतोवा नक्खत्ततो वा, जनपदरोगतो वा असद्धमतो वा, असन्दिट्ठतो वा असप्पुरिसतो वा, चण्डहत्थि-अस्स-मिग-गोण-कुक्कर-अहि-विच्छिक-मणिसप्प-दीपि-अच्छ-तरच्छ-सूकर-महि-यक्ख-रक्खसादीहि, नाना भयतो वा, नाना रोगतो वा, नाना उपद्दवतो वा आरक्खं गण्हन्तु॥३॥

यं पत्तं कुसलं तस्स, आनुभावेन पाणिनो।
सब्बे सद्धम्मराजस्स, ञत्वा धम्मं सुखावहं॥४॥

पापुणन्तु विसुद्धाय, सुखाय पटिपत्तिया।
असोकं अनुपायासं, निब्बानं सुखमुत्तमं॥५॥

२४. मंगल-कामना

शासन (धर्म) और लोक की सदा वृद्धि हो। शासन (धर्म) और लोक की देवता सदा रक्षा करें॥१॥

सब अपने परिवार और जाति-कुल सहित सुखी, दुःख रहित और प्रसन्न हों॥२॥

राजा, चोर, मनुष्य, अमनुष्य, अग्नि, जल, पिशाच, खूंटा, कांटा, नक्षत्र, संक्रामक रोग, असद्धर्म (पाप), दुश्मन, दुर्जन अथवा प्रचंड हाथी, घोड़ा, मृग, सांड़, कुत्ता, सांप, बिच्छू, मणिधर भुजंग, बाघ, भालू, लकड़बग्घा, सूकर, भैंसा, यक्ष, राक्षस आदि से होने वाले नाना प्रकार के भय, रोग, तथा उपद्रवों से सुरक्षित हों॥३॥

सद्धर्मराजा के जिस सुख लाने वाले धर्म को जान कर कुशल धर्म प्राप्त किया उस धर्म के प्रताप से सभी प्राणी विशुद्धि के लिए, सुख के लिए धर्म मार्ग पर आरूढ़ हों, शोक रहित, दुःख रहित श्रेष्ठ सुख निर्वाण को प्राप्त करें॥४-५॥

चिरं तिट्ठतु सद्धम्मो,
धम्मे होन्तु सगारवो।
सब्बेपि सत्ता कालेन,
सम्मा देवो पवस्सतु॥६॥

यथा रक्खिंसु पोराणा,
सुराजानो तथेविमं।
राजा रक्खतु धम्मेन,
अत्तनो व पजं पजं॥७॥

देवो वस्सतु कालेन,
सस्स-सम्पत्ति हेतु च।
फीतो भवतु लोको च,
राजा भवतु धम्मिको॥८॥

सब्बे सत्ता सुखी होन्तु,
सब्बे होन्तु च खेमिनो।
सब्बे भद्राणि पस्सन्तु,
मा कञ्चि दुक्खमागमा॥९॥

इमिना पुञ्ञकम्मेन,
मा मे बालसमागमो।
सन्तं समागमो होतु,
याव निब्बानपत्तिया॥१०॥

सद्धर्म चिरस्थायी हो। सभी प्राणी धर्म का गौरव करें। पर्जन्य (बादल) समय पर जल बरसावें॥६॥

जिस प्रकार प्राचीन काल के अच्छे राजाओं ने रक्षा की, उसी प्रकार (हमारा) राजा भी अपनी संतान सदृश प्रजा की धर्मपूर्वक रक्षा करे॥७॥

अच्छी फसल के लिए पर्जन्य देव (बादल) समय पर पानी बरसायें। लोग समृद्धिशाली हों। देश का राजा धार्मिक हो॥८॥

सभी प्राणी सुखी हों। सभी कुशल-क्षेम युक्त हों। सभी शुभ देखें। किसी को भी कोई दुःख प्राप्त न हो॥९॥

इस पुण्य कर्म के प्रभाव से मूर्खों से मेरी संगति न हो। जब तक निर्वाण न प्राप्त कर लूं, सदा सत्पुरुषों से ही मिलन हो॥१०॥

२५. मङ्गल-आसिंसन

आयु आरोग्य-सम्पत्ति,
सग्गसम्पत्तिमेव च।
ततो निब्बानसम्पत्ति,
इमिना ते समिज्झतु॥१॥

इच्छितं पत्थितं तुय्हं,
खिप्पमेव समिज्झतु।
सब्बे पूरेन्तु संकप्पा,
चन्दो पन्नरसो यथा॥२॥

२६. पुञ्ञानुमोदन

सब्बेसु चक्कवाळेसु,
यक्खा देवा च ब्रह्मुनो।
यं अम्हेहि कतं पुञ्ञं,
सब्बसम्पत्ति साधकं॥१॥

सब्बे तं अनुमोदित्वा,
समग्गा सासने रता।
पमादरहिता होन्तु,
आरक्खासु विसेसतो॥२॥

पुञ्ञभागमिदं च'ञ्ञं, समं ददाम कारितं।
अनुमोदन्तु तं सब्बे, मेदिनी ठातु सक्खिके॥३॥

२५. मंगल-आशीष

तुम्हें दीर्घायु-संपत्ति प्राप्त हो, आरोग्य-संपत्ति प्राप्त हो, स्वर्ग-संपत्ति प्राप्त हो और निर्वाण-संपत्ति प्राप्त हो॥१॥

सभी इच्छित और प्रार्थित वस्तुएं तुम्हें शीघ्र प्राप्त हों। तुम्हारे सभी संकल्प पूर्णिमा के चांद की तरह परिपूर्ण हों॥२॥

२६. पुण्य-अनुमोदन

सभी चक्रवालोंके यक्ष देव और ब्रह्मा हमारे द्वारा किये गये सर्वसंपत्ति साधक पुण्य का अनुमोदन करें॥१॥

और वे समग्र रूप में शासन में रत हो विशेष कर बुद्ध शासन की रक्षा में प्रमादरहित होवें॥२॥

इस परित्राण पाठ से अर्जित पुण्य को तथा अन्य पुण्यों को भी हम समान रूप से वितरित करते हैं। सभी (यक्ष, देव और ब्रह्मा) इसका अनुमोदन करें और पृथ्वी साक्षी रहे॥३॥

२७. धम्म-संवेग

सब्बे सङ्खारा अनिच्चा'ति, यदा पञ्ञाय पस्सति।
अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मग्गो विसुद्धिया॥१॥

सब्बे सङ्खारा दुक्खा'ति, यदा पञ्ञाय पस्सति।
अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मग्गो विसुद्धिया॥२॥

सब्बे धम्मा अनत्ता'ति, यदा पञ्ञाय पस्सति।
अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मग्गो विसुद्धिया॥३॥

अप्पमादेन, भिक्खवे, सम्पादेथ।
बुद्धुप्पादो दुल्लभो लोक स्मिं, मनुस्सभावो दुल्लभो,
दुल्लभा सद्धासम्पत्ति, पब्बजितभावो दुल्लभो,
सद्धम्मस्सवनं अति दुल्लभं,
एवं दिवसे दिवसे ओवदति॥४॥

हन्द दानी, भिक्खवे, आमन्तयामि वो।
वयधम्मा सङ्खारा, अप्पमादेन सम्पादेथ॥५॥

अनिच्चा वत सङ्खारा, उप्पादवय-धम्मिनो।
उपज्जित्वा निरुज्झन्ति, तेसं वुपसमो सुखो॥६॥

२७. धर्म-संवेग

सभी संस्कृत (बनी हुई) चीजें अनित्य हैं; जब कोई प्रज्ञा से यह देख लेता है, तो सभी दुःखों से मुक्त हो जाता है। ऐसा है यह चित्त विशुद्धि का मार्ग॥१॥

सभी संस्कृत (बनी हुई) चीजें दुःख हैं; जब कोई प्रज्ञा से यह देख लेता है, तो सभी दुःखों से मुक्त हो जाता है। ऐसा है यह चित्त विशुद्धि का मार्ग॥२॥

सभी धर्म अनात्म हैं; जब कोई प्रज्ञा से यह देख लेता है, तो सभी दुःखों से मुक्त हो जाता है। ऐसा है यह चित्त विशुद्धि का मार्ग॥३॥

हे भिक्षुओ! बिना प्रमाद के कुशल-सम्पादन करो। लोक में बुद्ध का उत्पन्न होना दुर्लभ है। मनुष्य का जीवन दुर्लभ है। श्रद्धा-संपत्ति दुर्लभ है। प्रव्रजित होना दुर्लभ है। सद्धर्म-श्रवण अति दुर्लभ है। इस प्रकार प्रतिदिन उपदेश दिया जाता है॥४॥

अच्छा भिक्षुओ! आओ! मैं तुम्हे आमन्त्रित करता हूं। सभी संस्कार व्यय-धर्मा हैं, नाशवान हैं, प्रमादरहित होकर अपने लक्ष्य को प्राप्त करो॥५॥

सचमुच! सारे संस्कार अनित्य ही तो हैं। उत्पन्न होने वाली सभी स्थितियां, वस्तु, व्यक्ति अनित्य ही तो हैं। उत्पन्न होना और नष्ट हो जाना, यह तो इनका धर्म ही है, स्वभाव ही है। विपश्यना साधना के अभ्यास द्वारा उत्पन्न हो कर निरुद्ध होने वाले इस प्रपंच का जब पूर्णतया उपशमन हो जाता है –पुनः उत्पन्न होने का क्रम समाप्त हो जाता है, उसी का नाम परम सुख है, वही निर्वाण-सुख है॥६॥

२८. पकिण्णक

सब्ब पापस्स अकरणं,
कुसलस्स उपसम्पदा।
सचित्तपरियोदपनं,
एतं बुद्धान-सासनं॥१॥

मनोपुब्बङ्गमा धम्मा,
मनोसेट्ठा मनोमया।
मनसा चे पदुट्ठेन,
भासति वा करोति वा।
ततो नं दुक्खमन्वेति,
चक्कं'व वहतो पदं॥२॥

मनोपुब्बङ्गमा धम्मा,
मनोसेट्ठा मनोमया।
मनसा चे पसन्नेन,
भासति वा करोति वा।
ततो नं सुखमन्वेति,
छाया'व अनपायिनी॥३॥

तुम्हेहि किच्चं आतप्पं,
अक्खातारो तथागता।
पटिपन्ना पमोक्खन्ति,
झायिनो मारबन्धना॥४॥

२८. प्रकीर्णक

सभी प्रकार के पापों को न करना, कुशल (पुण्य) कार्यों का संपादन करना, अपने चित्त को परिशुद्ध करना, यह है सभी बुद्धों की शिक्षा ॥१॥

सभी धर्म (अवस्थाएं) पहले मन में उत्पन्न होते हैं। मन ही मुख्य है, ये धर्म मनोमय हैं। जब मनुष्य मलिन मन से बोलता या कार्य करता है, तो दुःख उसके पीछे ऐसे ही हो लेता है, जैसे गाड़ी के पहिये बैल के पैरों के पीछे-पीछे ॥२॥

सभी धर्म (अवस्थाएं) पहले मन में उत्पन्न होते हैं। मन ही मुख्य है, ये धर्म मनोमय हैं। जब मनुष्य स्वच्छ मन से बोलता है या कार्य करता है, तो सुख उसके पीछे ऐसे ही हो लेता है, जैसे कभी साथ न छोड़ने वाली छाया ॥३॥

सभी तथागत बुद्ध केवल मार्ग आख्यात कर देते हैं; विधि सिखा देते हैं, अभ्यास और प्रयत्न तो तुम्हें ही करना है। जो स्वयं मार्ग पर आरूढ़ होते हैं, ध्यान में रत होते हैं, वे मार के याने मृत्यु के बंधन से मुक्त हो जाते हैं ॥४॥

अत्ता हि अत्तनो नाथो,
अत्ता हि अत्तनो गति।
तस्मा सञ्ञमयंत्तानं,
अस्सं भद्रं व वाणिजो॥५॥

चक्खुना संवरो साधु, साधु सोतेन संवरो।
घाणेन संवरो साधु, साधु जिह्राय संवरो।
कायेन संवरो साधु, साधु वाचाय संवरो।
मनसा संवरो साधु, साधु सब्बत्थ संवरो।
सब्बत्थ संवुतो भिक्खु, सब्बदुक्खा पमुच्चति॥६॥

यतो यतो सम्मसति,
खन्धानं उदयब्बयं।
लभती पीति-पामोज्जं,
अमतं तं विजानतं॥७॥

सब्बो पज्जलितो लोको,
सब्बो लोको पकम्पितो॥८॥

तुम स्वयं ही अपना स्वामी हो, आप ही स्वयं गति हो!
(अपनी अच्छी या बुरी गति के तुम स्वयं ही तो जिम्मेदार
हो!) इसलिए स्वयं को वश में रखो; वैसे ही, जैसे
कि घोड़ों का कुशल व्यापारी श्रेष्ठ घोड़ों को पालतू बना
कर वश में रखता है, संयत रखता है॥५॥

आंख का संवर (संयम) भला है, भला है कान का संवर।
नाक का संवर भला है, भला है जीभ का संवर।
शरीर का संवर भला है, भला है वाणी का संवर।
मन का संवर भला है, भला है सर्वत्र संवर।
(मन और काया स्कंध में) सर्वत्र संवर रखने वाला
भिक्षु (साधक) सब दुःखों से मुक्त हो जाता है॥६॥

साधक सम्यक सावधानता के साथ जब- जब शरीर और
चित्त स्कंधों के उदय-व्यय रूपी अनित्यता की
विपश्यनानुभूति करता है, तब- तब प्रीति प्रमोद रूपी
अंतःसुख (आध्यात्मिक सुख) की प्राप्ति करता है। पंडितों
(जानने वालों) के लिए वह अमृत है॥७॥

सारे लोक प्रज्वलित ही प्रज्वलित हैं।
सारे लोक प्रकंपित ही प्रकंपित हैं॥८॥

२९. खन्धपरित्त

सब्बासीविसजातीनं दिब्बमन्तागद विय।
यं नासेति विसं घोरं, सेसञ्चापि परिस्सयं॥

आणाखेत्तम्हि सब्बत्थ, सब्बदा सब्बपाणिनं।
सब्बसोपि विनासेति परित्तं तं भणामहे॥

एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिक स्स आरामे। तेन खो पन समयेन सावत्थियं अञ्ञतरो भिक्खु अहिना दट्ठो क ालक तो होति। अथ खो सम्बहुला भिक्खु येन भगवा तेनपसङ्कमिंसु, उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एक मन्तं निसीदिंसु। एक मन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं – 'इध भन्ते! सावत्थियं अञ्ञतरो भिक्खु अहिना दट्ठो क ालक तोति'।

"नहि नून सो भिक्खवे! भिक्खु चत्तारि अहिराजकु लानि मेत्तेन चित्तेन फ रि, सचे हि सो भिक्खवे! भिक्खु चत्तारि अहिराजकु लानि मेत्तेन चित्तेन फ रेय्य, नहि सो भिक्खवे! भिक्खु अहिना दट्ठो क ालं क रेय्य। क तमानि चत्तारि अहिराजकु लानि? विरूपक्खं अहिराजकु लं, एरापथं अहिराजकु लं, छब्यापुत्तं अहिराजकु लं, क ण्हागोतमकं अहिराजकु लं। नहि नून सो भिक्खवे! भिक्खु इमानि चत्तारि अहिराजकु लानि मेत्तेन चित्तेन फ रि। सचे हि सो भिक्खवे! भिक्खु इमानि चत्तारि अहिराजकु लानि मेत्तेन चित्तेन फ रेय्य नहि सो भिक्खवे! भिक्खु अहिना दट्ठो क ालं क रेय्य। अनुजानामि भिक्खवे! इमानि चतारि अहिराजकु लानि मेत्तेन चित्तेन फ रितुं अत्तगुत्तिया, अत्तरक्खाय, अत्तपरित्तायाति।"

इदमवोच भगवा, इदं वत्वा सुगतो, अथापरं एतदवोच सत्था –

२९. खन्धपरित्त

सभी प्रकार की सर्प जातियों के विष के लिए जो दिव्य मंत्रौषधि के समान है, जो भयानक विष को नष्ट करता है, शेष खतरों को भी (दूर भगाता है), भगवान बुद्ध के आज्ञा-क्षेत्र (जहां तक बुद्ध शासन है) में सर्वत्र और सदा प्राणियों के सभी प्रकार के विषों को विनष्ट करता है, उस परित्राण को कह रहे हैं –

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक के जेतवन- आराम में विहार कर रहे थे। उस समय श्रावस्ती में कोई भिक्षु सांप के डँसने से मर गया था। तब बहुत से भिक्षु जहां भगवान थे वहां गये, वहां जाकर भगवान को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उन भिक्षुओं ने भगवान से कहा –"भंते!यहां श्रावस्ती में कोई भिक्षु सांप के डँसने से मर गया है।"

"भिक्षुओ! उस भिक्षु ने निश्चय ही चार सर्प-कुलों के प्रति अपने चित्त को मैत्री-भावना से आप्लावित नहीं किया। यदि भिक्षुओ! वह भिक्षु चार सर्प-कुलों के प्रति अपने चित्त को मैत्री-भावना से आप्लावित करता तो भिक्षुओ! वह भिक्षु सांप के डँसने से नहीं मरता। कौन-से चार सर्प-कुल? विरूपाक्ष सर्प-कुल, ऐरापथ सर्प-कुल, छब्यापुत्र सर्प-कुल और कृष्णगौतम सर्प-कुल। भिक्षुओ! यदि वह भिक्षु इन चार सर्प-कुलों के प्रति अपने चित्त को मैत्री-भावना से आप्लावित किये होता तो भिक्षुओ! वह भिक्षु सांप के डँसने से नहीं मरता। भिक्षुओ! आज्ञा देता हूं अपनी गुप्ति, रक्षा और परित्राण के लिए इन चार सर्प-कुलों के प्रति अपने चित्त को मैत्री-भावना से आप्लावित करने की।"

भगवान ने यह कहा। सुगत ने ऐसा कहकर, फिर शास्ता ने ऐसा कहा--

विरूपक्खेहि मे मेत्तं, मेत्तं एरापथेहि मे।
छब्यापुत्तेहि मे मेत्तं, मेत्तं कण्हागोतमके हि च॥१॥

अपादके हि मे मेत्तं, मेत्तं द्विपादके हि मे।
चतुप्पदेहि मे मेत्तं, मेत्तं बहुप्पदेहि मे॥२॥

मा मं अपादको हिंसि, मा मं हिंसि द्विपादको।
मा मं चतुप्पदो हिंसि, मा मं हिंसि बहुप्पदो॥३॥

सब्बे सत्ता सब्बे पाणा, सब्बे भूता च केवला।
सब्बे भद्रानि पस्सन्तु, मा किञ्चि पापमागमा॥४॥

अप्पमाणो बुद्धो, अप्पमाणो धम्मो, अप्पमाणो सङ्घो, पमाणवन्तानि सिरिंसपानि अहिविच्छिका सतपदी उण्णानाभि सरबू मूसिका, कता मे रक्खा, कता मे परित्ता, पटिक्कमन्तु भूतानि, सोहं नमो भगवतो नमो सत्तन्नं सम्मासम्बुद्धानन्ति।

विरूपाक्षों के प्रति मेरी मैत्री भावना है, ऐरापथों के प्रति भी मेरी मैत्री भावना है, छब्यापुत्रों के प्रति मेरी मैत्री भावना है और कृष्णगौतम के प्रति भी मेरी मैत्री भावना है॥१॥

बिना पैर वालों के प्रति मेरी मैत्री भावना है, दो पैर वालों के प्रति भी मेरी मैत्री भावना है, चार पैर वालों के प्रति भी मेरी मैत्री भावना है और बहुत पैर वालों के प्रति भी मेरी मैत्री भावना है॥२॥

बिना पैरवाला मेरी हिंसा न करे, दो पैरवाला भी मेरी हिंसा न करे। चार पैर वाला मेरी हिंसा न करे और बहुत पैरवाला भी मेरी हिंसा न करे॥३॥

सभी सत्त्व, सभी प्राणी और समस्त उत्पन्न जीव-जन्तु सभी कल्याणदर्शी हों (कुशल कर्म करने वाले हों) और उनमें लेशमात्र भी बुरे विचार न आवें।

बुद्ध धर्म और संघ अप्रामाण्य (प्रमाण रहित) हैं, किन्तु रेंगने वाले प्राणी, सांप, बिच्छू, गोजर, मकड़ा (ऊर्णनाभ) छिपकली, चूहा –इनकी संख्या सीमित है। मैंने रक्षा कर ली, मैंने परित्राण कर लिया, सभी प्राणी पीछे हट जायं, लौट जायं। मैं भगवान को नमस्कार करता हूं। सातों सम्यक संबुद्धों को नमस्कार करता हूं।